ISSN-0970-6518

हरियाणा खेती

वर्ष 52 अंक 07

जुलाई 2019
वार्षिक चंदा ₹ 150
आजीवन सदस्यता ₹ 1500

प्रकाशन अनुभाग
विस्तार शिक्षा निदेशालय
चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

हरियाणा खेती

निदेशक, शिक्षा विभाग हरियाणा द्वारा उच्च/उच्चतर विद्यालयों के लिए उनके पत्र क्रमांक 25/34.7 4 पु. (2) दिनांक 4.9.74 द्वारा अनुमोदित

© कापीराइट प्रकाशकाधीन

वर्ष 52 | जुलाई 2019 | अंक 07

इस अंक में

लेख का नाम	लेखक का नाम	पृष्ठ
मक्का फसल में खरपतवार नियंत्रण	एस. एस. पुनियां, अजय सिहं एवं टोडरमल	1
शुष्क क्षेत्रों में खरीफ फसलों की पैदावार बढ़ाने हेतु : सामयिक प्रबंधन व सुझाव	सुरेन्द्र कुमार शर्मा एवं सूबे सिंह	2
राइजोबैक्टीरिया : रासायनिक खाद का उच्चतर विकल्प	कविता रानी, पंकज शर्मा एवं राहुल कुमार	3
बाग लगाने की वैज्ञानिक विधि - सावधानियां	अंकित गावरी, जीत राम शर्मा एवं प्रवीण	3
बाग लगाने से पहले मिट्टी की जांच	राकेश कुमार, रीतिका एवं मनोज कुमार शर्मा	4
कपास की फसल में बीज एवं मृदा जनित रोग	अनिल कुमार सैनी एवं धर्मेंदर सिंह	5
हल्दी का संसाधन एवं इसके लाभ	नेहा, वीनू सांगवान एवं विकास कुमार	6
हरी खाद की उपयोगिता	सुनील बैनीवाल, देवेंद्र सिंह जाखड़ एवं राहुल कुमार	6
आलू का मूल्य संवर्धन एवं फसलोपरांत प्रबंधन	कनिका पंवार एवं इंदु पांचाल	7
बागवानी फसलों की गुणवत्ता मूल्यांकन के लिए गैर-हानिकारक इमेजिंग तकनीक	सचिन, वी. के. सिंह एवं सुशांत भारद्वाज	8
वैज्ञानिक विधि से बाग लगाएं	सुलेमान मोहम्मद एवं विरेंद्र सिंह	9
स्प्रेयर का रख-रखाव : कैसे	विनोद कुमार, नरेंद्र एवं सुशील कुमार	10
ब्रिकेटिंग: धान के भूसा प्रबंधन का एक अच्छा विकल्प	यादविका, कमला मलिक एवं एम. के. गर्ग	11
घरेलू स्तर पर खाद्य पदार्थों का सुरक्षित भण्डारण	पूनम एवं अशोक ढिल्लों	18
बच्चों के विकास में आंगनवाड़ी केन्द्रों का योगदान	पूनम रानी, बिमला ढांडा एवं सलोचना	19
किसानों के लिए खाद्य प्रसंस्करण का महत्व	मोनिका माथुर एवं रवीना कारगवाल	20
बढ़ता नदी प्रदूषण : एक सामाजिक आर्थिक समस्या	जतेश काठपालिया, रश्मि त्यागी एवं सुभाष चन्द्र	21
बुखार (ज्वर) में भोजन प्रबंधन	संतोष रानी, राजेश दहिया एवं कान्ता सबरवाल	22
कैसे हों धात्री (दूध पिलाने वाली) माताओं के वस्त्र	पारुल गिल, पंकज गिल एवं पूनम मलिक	23
गर्मी के मौसम में स्वास्थ्य सम्बन्धी सुझाव	वीनू सांगवान एवं मीनू सिरोही	23
पशुओं के लिए साइलेज उत्पादन	वीनस, ज्योति शून्थवाल एवं सज्जन सिहाग	24
भिंडी की फसल : माइट की रोकथाम	बजरंग लाल शर्मा, अनिल एवं नरेश कुमार	25
बच्चों में भाषा कौशल का विकास	रीना, रीतु एवं बिमला ढांडा	25
घीया की वैज्ञानिक विधि से खेती	मक्खन मजोका, शिवानी कम्बोज एवं धर्मवीर दुहन	26
Water Management for Agricultural Development and Food Security	Sube Singh, Vijay and Rahul Kumar	28
Dust Storm : Causes and Preventive Measure	Yogesh Kumar, Raj Singh and Anil Kumar	30
Agro-Techniques for Direct Seeding of Basmati Rice	Satyajeet, Samunder Singh and S. P. Yadav	31
Practical Methods of Heat Detection in Dairy Cows and Buffaloes	Swati Ruhil and Vikas Khichar	32
स्थाई स्तम्भ : अगस्त मास के कृषि कार्य		**13**

तकनीकी सलाहकार
डॉ. आर. एस. हुड्डा
निदेशक, विस्तार शिक्षा

सह-निदेशक (प्रकाशन)
डॉ. बिमलेन्द्र कुमारी

संपादक
डॉ. सुषमा आनंद
सह-निदेशक (हिन्दी)

संकलन
डॉ. सूबे सिंह
विस्तार शिक्षा निदेशालय

सम्पादक (अंग्रेजी)
सुनीता सांगवान
प्रकाशन अनुभाग

डीटीपी एवं आवरण सज्जा
राजेश कुमार
प्रकाशन अनुभाग

मक्का फसल में खरपतवार नियंत्रण

✍ **एस. एस. पुनियां, अजय सिहं एवं टोडरमल**
सस्य विज्ञान विभाग
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

मक्का हरियाणा राज्य में खरीफ व बसंत ऋतु में बोई जाने वाली पंचकुला, अम्बाला, यमुनानगर, कुरूक्षेत्र व करनाल ज़िलों की प्रमुख फसल है। खरीफ की फसल में बसंत ऋतु की फसल की अपेक्षा औसत पैदावार काफी कम है जिसका मुख्य कारण बरसात के बार-बार आने पर खरपतवारों का उचित नियंत्रण न हो पाना है। खरपतवारों का उचित प्रबन्ध न करने पर मक्का के उत्पादन में 50-60 प्रतिशत तक की कमी पाई जाती है।

मक्का फसल में प्रारम्भ में बढ़वार मन्द गति से होती है। अत: खेत में पर्याप्त संख्या में खरपतवार उगकर फसल को भारी नुकसान पहुंचाते हैं। मक्का के खेत में भूमि की किस्म, जलवायु तथा मौसम के अनुसार अलग-अलग खरपतवारों की किस्में पाई जाती हैं जैसे कि डीला, दूब, सांवक, पानपत्ता बेल, बरू, मकड़ा, तकड़ी घास, पैरा घास व हुलहुल इत्यादि। अत: इन खरपतवारों की वृद्धि को प्रारम्भिक जीवन काल में नष्ट करके खेत को खरपतवार विहीन रखना आवश्यक है। प्रयोगों के आधार पर पाया गया है कि फसल की बुवाई के 45 दिन तक खेत को खरपतवारों से मुक्त रखने में सम्पूर्ण जीवन काल तक खरपतवारों को नष्ट करने के समान उपज प्राप्त होती है। मक्का के खेत में उगे खरपतवारों को नष्ट करने के लिए यांत्रिक तथा रासायनिक दोनों विधियों का प्रयोग किया जाता है। प्रारम्भ में यह धारणा थी कि मक्का के खेत में गुड़ाई करके खरपतवारों के नष्ट हो जाने के साथ ही भूमि खुल जाती है जिससे मृदा में वायु संचार के बढ़ जाने से अधिक उपज प्राप्त होती है।

शाकनाशक पदार्थों के उपलब्ध न होने पर मक्का की फसल में 2-3 बार निराई-गुड़ाई करनी आवश्यक होती है। इसमें प्रथम निराई बोने के 15 दिन बाद एवं दूसरी 30-35 दिन बाद की जानी चाहिए। पौधे में दूसरी निराई के समय अतिरिक्त तथा कमज़ोर पौधों की छंटनी भी की जाती है। फसल के घुटनों तक बढ़ जाने पर निराई-गुड़ाई नहीं करनी चाहिए। निराई खुरपी, हैण्ड हो तथा बैलों या ट्रैक्टर चालित हो या कल्टीवेटर से की जाती है। ध्यान रखना चाहिए कि गुड़ाई 4-5 सैं.मी. से अधिक गहरी न की जाए। गुड़ाई सावधानीपूर्वक इस प्रकार की जानी चाहिए कि जिससे पौधों तथा जड़ों को क्षति न पहुंचने पाए। परन्तु बार-बार बरसात होने की वजह से एवं निराई-गुड़ाई के समय पर उपलब्ध न होने की वजह से रासायनिक खरपतवार नाशक की ज़रूरत पड़ती है। इस दिशा 400 से 600 ग्राम एट्राजीन (50 प्रतिशत घुलनशील पाऊडर) प्रति एकड़ 200 से 250 लीटर पानी में मिलाकर बिजाई के तुरन्त बाद छिड़कें। छिड़काव के समय भूमि में नमी रहने पर इस रसायन की प्रभावकारी शक्ति बढ़ जाती है। परन्तु एट्राजीन केवल सांवक, मकड़ा व कुछ चौड़ी पत्ती वाले खरपतवारों का ही नियंत्रण करती है। अगर खेत में संकरी चौड़ी पत्ती व डीला जाति के खरपतवार होते हैं टैंबोट्रायोन (लोडिस 34.4 प्रतिशत घु.पा.) का 115 मि.ली. तैयार शुद्ध मिश्रण 400 मि.ली. चिपचिपे पदार्थ को 200 लीटर पानी की मात्रा बिजाई के 10 से 20 दिन बाद या खरपतवार की 2-3 पत्ती अवस्था पर प्रति एकड़ छिड़काव करें।

पिछले कुछ वर्षों में किसानों के खेतों पर किए गए प्रयोगों से पता चला है कि टैम्बोट्रायोन का प्रयोग करने से उपज 36.3 प्रतिशत बढ़ी है। यह खरपतवारनाशक उन खरपतवारों को भी मारता है जो कि एट्राजीन के प्रयोग द्वारा नियंत्रित नहीं होते (सारणी 1)

सारणी 1: खरीफ ऋतु की मक्का में खरपतवारनाशकों का असर, उपज पर प्रभाव व लाभ

शाकनाशक	उपज (कि.ग्रा./एकड़)	कुल आय (रु./एकड़)	कुल व्यय (रु./एकड़)	खरपतवार नियंत्रण प्रतिशत	लाभ : लागत अनुपात
कन्ट्रोल	1,288	18,032	8,400	0	2.14
एट्राजीन	1,576	22,008	8,700	55	2.52
टैम्बोट्रायोन	1,755	23,662	9,200	93	2.57

इसके अतिरिक्त हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय के क्षेत्रीय शोध केन्द्र, उचानी, करनाल में किए गए प्रयोगों द्वारा पाया गया है कि एलाक्लोर व टैम्बोट्रायोन के प्रयोग करने से खरपतवारों का उचित नियंत्रण होता है (सारणी 2)।

सारणी 2: खरीफ ऋतु की मक्का में खरपतवारनाशकों का असर व उपज पर प्रभाव

शाकनाशक	खरपतवारनाशक की मात्रा (ग्राम या मिली प्रति एकड़)	खरपतवारनाशक के छिड़काव का समय	50 दिन बाद विभिन्न खरपतवारों का नियंत्रण				उपज (कि.ग्रा./एकड़)	लाभ
			डीला	पैराघास	मकड़ा	चौड़ी पत्ती वाले		
गुड़ाई व एट्राजीन	400	बिजाई के 20 व 35 दिन बाद	36.3	92.8	90.1	78.8	2,442	15,453
एलाक्लोर	1600	बिजाई के पूर्व व 35 दिन बाद	82.5	94.7	93.4	83.4	2,544	16,051
टैम्बोट्रायोन चिपचिपे पदार्थ के साथ	115	बिजाई के 35 दिन बाद	80.2	93.4	93.8	100	2,401	15,705
टैम्बोट्रायोन चिपचिपे पदार्थ के साथ	134	बिजाई के 35 दिन बाद	82.9	94.4	93.7	100	2,421	15,728
एलाक्लोर व टैम्बोट्रायोन चिपचिपे पदार्थ के साथ	1600 व 115	बिजाई के पूर्व व 35 दिन बाद	85.2	94.3	95.1	100	2,639	17,985
एट्राजीन व टैम्बोट्रायोन चिपचिपे पदार्थ के साथ	800 व 115	बिजाई के पूर्व व 35 दिन बाद	82.6	94.9	94.3	100	2,458	16,177
गुड़ाई		बिजाई के 20 व 35 दिन बाद	84.55	93.7	93.6	81.2	2,561	15,146
चेक			0.0	0.0	0.0	0.0	1,246	1,563

शुष्क क्षेत्रों में खरीफ फसलों की पैदावार बढ़ाने हेतु : सामयिक प्रबंधन व सुझाव

✍ सुरेन्द्र कुमार शर्मा एवं सूबे सिंह[1]
सस्य विज्ञान विभाग
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

हरियाणा प्रदेश में सिंचित साधनों के बढ़ने के पश्चात भी कुल खेती योग्य भूमि का लगभग 20 प्रतिशत भाग शुष्क खेती के अंतर्गत आता है, जो कि मुख्यत: वर्षा पर आधारित है। बाजरा खरीफ मौसम की प्रमुख फसल होने के साथ ही शुष्क क्षेत्रों में इसके उत्पादन का महत्वपूर्ण योगदान है। प्रदेश में कुल वर्षा अधिकतर दो महीनों के अन्दर ही (मध्य जुलाई से मध्य सितम्बर तक) हो जाती है। यदि हम पिछले 10 वर्षों के अंतर्गत वर्षा की मात्रा, मानसून के आगमन व वापसी को देखते हैं तो तालिका 1 से स्पष्ट पता चलता है कि वर्ष 2009, 2011, 2012, 2014 व 2015 में वर्षा सामान्य से भी कम हुई है। इसके अतिरिक्त वर्ष 2017 में मानसून की वापसी भी अगस्त में हुई है जबकि वर्ष 2014 में तो सूखे की स्थिति का सामना करना पड़ा था। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि शुष्क क्षेत्रों में किसान को मुख्यत: वर्षा की कमी, वर्षा के समुचित वितरण का अभाव, मानसून की जल्दी वापसी व लंबे समय तक वर्षा का न होना आदि समस्याओं का सामना करना पड़ता है। इन क्षेत्रों में औसत 300-500 मि.मी. वर्षा प्रतिवर्ष होती है परंतु उपर्युक्त असामान्य परिस्थितियों के कारण यह फसलों की ज़रूरत को पूरा करने में असमर्थ हो जाती है तथा किसान को फसल का भरपूर लाभ नहीं मिल पाता। अत: उपर्युक्त परिस्थितियों में शुष्क क्षेत्रों के लिए खरीफ फसलों की पैदावार बढ़ाने हेतु सामयिक प्रबंधन अति आवश्यक है, जिन्हें अपनाकर किसान निश्चित रूप से पैदावार बढ़ा सकते हैं।

तालिका 1 : खरीफ के मौसम में बारानी खेती अनुसंधान प्रक्षेत्र पर रिकार्ड की गई वर्षा की मात्रा (2009-2018)

वर्ष	वर्षा की मात्रा (मि.मी.)	मानसून का आगमन	मानसून की वापसी
2009	299	15 जुलाई	12 सितम्बर
2010	536	8 जून	14 सितम्बर
2011	275	16 जुलाई	05 सितम्बर
2012	303	21 जुलाई	16 सितम्बर
2013	343	16 जून	22 सितम्बर
2014	162	29 जुलाई	05 सितम्बर
2015	275	24 जून	28 सितम्बर
2016	392	14 जून	25 सितम्बर
2017	461	17 जून	31 अगस्त
2018	381	29 जून	24 सितम्बर

सामयिक प्रबंधन

1. मानसून का देर से आना

बाजरे की एच एच बी-67 (संशोधित) प्रजाति का प्रयोग कम अवधि की किस्म होने के कारण यह पछेती बोने पर भी अच्छी पैदावार देती है।

बाजरे की जुलाई के अन्तिम सप्ताह तक बिजाई।

बाजरे की तीन सप्ताह पुरानी नर्सरी के पौधों को जुलाई के अंत से अगस्त के दूसरे सप्ताह तक रोपना।

मूंग, लोबिया एवं ग्वार की अगस्त के प्रथम सप्ताह तक बिजाई।

2. फसल का प्रारंभिक दशा के दौरान सूखाग्रस्त होना

दोबारा वर्षा होने पर रिक्त स्थानों पर बाजरे की पौध की रोपाई।

पहिए वाला कसौला (ह्वील हैण्ड हो) द्वारा भूमि पलवार करना।

3. बिजाई के समय लगातार वर्षा का होना

सूखे खेतों में रीजर-सीडर द्वारा डोली व नाली विधि से बिजाई करना।

मानसून की वर्षा होने से पहले बाजरे की पौध तैयार रखना।

मानसून की वर्षा के तुरंत बाद बाजरे की पौध रोपना।

4. मानसून की जल्दी वापसी

बाजरे की प्रत्येक तीसरी लाइन को काटकर चारे में प्रयोग करना।

फसल की निराई-गोड़ाई करने के पश्चात् सरसों की तूड़ी (4 टन प्रति हैक्टेयर) से पलवार करना।

यदि संभव हो तो वर्षा के अपवाह को रोककर जमा किए गए वर्षा के पानी से फसलों की संवेदनशील अवस्था में सिंचाई करना।

पैदावार बढ़ाने हेतु सुझाव

भूमि को अच्छी तरह जोतकर तैयार रखें व खेत की मेढ़बंधी करें।

सप्ताह में 25-30 मि.मी. वर्षा (कम से कम एक वर्षा 15-20 मि.मी.) होने पर फसल की बुवाई करें।

मानसून शुरू होने के बाद फसलों की बिजाई यथाशीघ्र करें।

खेती योग्य भूमि के 60 प्रतिशत हिस्से में खरीफ फसलों को बोएं व बाकी 40 प्रतिशत हिस्सा रबी फसलों के लिए छोड़ना चाहिए।

ऐसे क्षेत्र जहां ज़मीन पर पपड़ी की समस्या न हो, बाजरे की बिजाई दो पोरा बारानी हल से करें।

ज़मीन पर पपड़ी बनने वाले क्षेत्रों में देशी खाद की मात्रा 4 टन प्रति हैक्टेयर के हिसाब से प्रयोग करें।

खरीफ फसलों वाले क्षेत्र के आधे भाग में बाजरा, एक चौथाई में ग्वार व बाकी एक चौथाई में दाल वाली फसलों की बिजाई करें।

जहां तक संभव हो डोली व नाली विधि द्वारा बिजाई करके पानी का संग्रहण करें।

फसलों की विकसित किस्मों के प्रमाणित बीज का ही प्रयोग करें।

फसलों की 45 सैं.मी. या 30:60 सैं.मी.के अनुपात से पंक्तियों में बिजाई करें।

बाजरे व मूंग की भरपूर फसल लेने के लिए इनकी पट्टिका पद्धति द्वारा 6:3 या 8:4 के अनुपात से 30 सैं.मी. की पंक्तियों में बिजाई करें।

बाजरे की तीन सप्ताह पुरानी नर्सरी के पौधों की वर्षा होने पर रिक्त स्थानों में रोपाई करें।

बाजरे में 16 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 8 कि.ग्रा. फास्फोरस व 3 वर्ष में एक बार 10 कि.ग्रा. ज़िंक सल्फेट प्रति एकड़ तथा दाल वाली फसलों में 8 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 16 कि.ग्रा. फास्फोरस व 10 कि.ग्रा. ज़िंक सल्फेट प्रति एकड़ की दर से डालना चाहिए।

बाजरे में फास्फोरस की पूरी मात्रा तथा नाइट्रोजन की आधी मात्रा को बिजाई से पहले आखरी जुताई पर खेत में पोर दें तथा बाकी की आधी नाइट्रोजन खड़ी फसल में जब आखिरी निराई-गोड़ाई का समय हो तथा भूमि में जब नमी की मात्रा ठीक हो, देनी चाहिए। दलहनी फसलों में खाद की पूरी मात्रा बोने के समय दे देनी चाहिए।

पहिए वाले कसौले से समय-समय पर निराई- गोड़ाई करते रहें।

यदि फसल अवधि के बीच में सूखा पड़ जाता हैं तो बाजरे की बिजाई के 40 दिन बाद प्रत्येक तीसरी लाइन को काटकर चारे के लिए प्रयोग करें ।

[1]विस्तार शिक्षा निदेशालय, चौ.च.सिं.ह.कृ.वि., हिसार।

राइजोबैक्टीरिया : रासायनिक खाद का उच्चतर विकल्प

✍ कविता रानी, पंकज शर्मा एवं राहुल कुमार[1]
सूक्ष्मजीव विज्ञान विभाग
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

विकासशील देशों में कृषि राष्ट्रीय आय और निर्यात आय का एक बड़ा हिस्सा है क्योंकि यह खाद्य सुरक्षा और रोज़गार सुनिश्चित करती है। आज के समय में स्थायी कृषि, पारंपरिक कृषि की तुलना में बहुत महत्वपूर्ण है क्योंकि यह हमारे भविष्य की कृषि आवश्यकताओं को पूरा करने की क्षमता प्रदान करता है जोकि पारंपरिक कृषि से संभव नहीं है। हाल ही में पर्यावरण हितैषी और स्थायी कृषि में बहुत रुचि हुई है। राइजोबैक्टीरिया, बैक्टीरिया का एक ऐसा समूह है जो पौधों की वृद्धि को बढ़ावा देने वाले पदार्थों के माध्यम से पौधों की वृद्धि और उपज को बढ़ाता है। कृत्रिम उर्वरकों के नकारात्मक पर्यावरणीय प्रभावों और उनकी बढ़ती लागतों को देखते हुए, पिछले कुछ दशकों के दौरान स्थायी और सुरक्षित कृषि के लिए फायदेमंद मृदा सूक्ष्मजीवों जैसे पौधों की वृद्धि को बढ़ावा देने वाले राइजोबैक्टीरिया, पीजीपीआर का उपयोग विश्व स्तर पर बढ़ा है। जैविक उर्वरक के रूप में पीजीपीआर को स्थायी कृषि के लिए कुशल मृदा रोगाणुओं के रूप में पहचाना जाता है और कृषि पैदावार में सुधार के लिए बहुत बड़ा भागीदार माना जाता है।

पौधों की वृद्धि को सुरक्षित बढ़ावा देना : पौधों की वृद्धि को बढ़ावा देने वाले राइजोबैक्टीरिया पौधों के विकास को बढ़ावा देने वाले विभिन्न पदार्थों के उत्पादन से कई मायनों में पौधों की वृद्धि में सुधार करने के लिए जाने जाते हैं। कृत्रिम उर्वरकों और कीटनाशकों की तुलना में राइजोबैक्टीरिया द्वारा स्रावित पौधों की वृद्धि को बढ़ावा देने वाले पदार्थों को पर्यावरणीय रूप से सुरक्षित माना जाता है। ये पदार्थ फसल की वृद्धि में सहायक हैं और सुरक्षित पर्यावरण और फसल उत्पादकता में स्थिरता लाने में मदद करते हैं।

मृदा - पादप वृद्धि को बढ़ाने वाले राइजोबैक्टीरिया का मिलन स्थल : पौधों की जड़ों के आस-पास की मृदा में विभिन्न प्रकार के **पादप** वृद्धि को बढ़ाने वाले राइजोबैक्टीरिया (पीजीपीआर) समुदाय होते हैं जो फसल उत्पादकता पर लाभकारी प्रभाव दिखाते हैं। मृदा में पाए जाने वाले पीजीपीआर समुदायों की विविधता, गतिशीलता और कृषि उत्पादकता में उनकी लाभप्रद और सहकारी भूमिकाओं की समझ पर कई शोध जांच की जाती हैं। संयंत्र विकास को बढ़ावा देने वाली गतिविधि को प्रदर्शित करने वाले मृदा में पाए जाने वाले पीजीपीआर के कुछ सामान्य उदाहरण हैं *स्यूडोमोनाज, एजोस्पिरिलम, एजोटोबैक्टर, बैसिलस, बर्खोल्डेरिया, एंटेरोबैक्टर, राइजोबियम, अरविनिया, माइकोबैक्टीरियम, माइकोराइजोबियम, फ्लेवोबैक्टीरियम,* आदि।

कृषि क्षेत्र में उपयोग : हालांकि मृदा में लाभकारी सूक्ष्मजीवों के विविध समुदाय हैं, लेकिन शुरुआत में पीजीपीआर तुलनात्मक रूप से कम संख्या में मौजूद होते हैं। इसलिए इनकी एकाग्रता को बढ़ाने के लिए कृत्रिम माध्यम में इन जीवाणुओं के गुणन की आवश्यकता पड़ती है और फिर इन जीवाणुओं को बीज अनुप्रयोग के माध्यम से कृषि क्षेत्र में उपयोग किया जाता है। ये गुणित राइजोबैक्टीरिया मृदा में बहुत तेज़ गति से अपनी संख्या बढ़ाते हैं और पौधों के विकास को बढ़ावा देने और पैदावार बढ़ाने में सहायक होते हैं।

[1]एमिटी विश्वविद्यालय, नोएडा

बाग लगाने की वैज्ञानिक विधि – सावधानियां

✍ अंकित गावरी, जीत राम शर्मा एवं प्रवीण
उद्यान विभाग
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

हरियाणा एक कृषि प्रधान राज्य है। हरियाणा की जनसंख्या का 75 प्रतिशत हिस्सा खेती से अपना घर खर्च निकालता है। परन्तु दिन प्रतिदिन हरियाणा की जोत का आकार छोटा होता जा रहा है जिसके कारण पारम्परिक खेती लाभदायक नहीं रही है। हरियाणा के किसान आर्थिक संकट से बचने के लिए अपना रुख फलोत्पादन की तरफ कर रहे हैं क्योंकि फलोत्पादन से कम जोत में भी अधिक लाभ लिया जा सकता है। हरियाणा की जलवायु के अनुसार किन्नू, अमरूद, बेर आदि का बाग लगाना बहुत लाभदायक पाया गया है। फलोत्पादन से अच्छा लाभ लेने के लिए वैज्ञानिक विधि से बाग लगाना अति आवश्यक है। जिससे गुणवत्तायुक्त अधिक उत्पादन प्राप्त किया जा सकता है। वैज्ञानिक विधि से बाग लगाने के लिए कुछ मुख्य बातों पर ध्यान देना अति आवश्यक है :

बाग का रेखांकन : रेखांकन क्रिया एक अति आवश्यक क्रिया है। रेखांकन का मतलब फलों के पेड़ों को व्यवस्थित तरीके से रोपण करना है ताकि प्रति एकड़ में पेड़ों की अधिकतम संख्या सुनिश्चित हो सके और प्रत्येक फल को वृद्धि के लिए पर्याप्त स्थान मिल सके। कर्षण क्रियाएं करने में परेशानी न हो तथा फल वृक्ष देखने में सुन्दर प्रतीत हों।

उद्यान के रेखांकन के लिए निम्न विधियां मुख्य रूप से प्रयोग में लायी जाती हैं : 1. वर्गाकार विधि; 2. आयताकार विधि; 3. त्रिभुजाकार विधि; 4. षट्भुजाकार विधि; एवं 5. पूरक विधि।

1. वर्गाकार विधि : यह विधि सबसे सरल है। इस प्रकार के रेखांकन में पौधे व कतार से कतार की दूरी एक समान रखी जाती है।

2. आयताकार विधि : यह विधि वर्गाकार के ही समान होती है केवल इतना अंतर होता है इसमें पौधे से पौधे की दूरी कतार से कतार की दूरी से कम होती है।

3. त्रिभुजाकार विधि : इस विधि में भी पंक्ति एवं पौधे की आपसी दूरी वर्गाकार विधि की तरह होती है बस अंतर यह होता है कि इसमें दूसरी कतार में पौधे पहली कतार के मध्य में लगाए जाते हैं।

4. षट्भुजाकार विधि : इस विधि में 6 वृक्ष एक षट्भुजाकार आकृति तैयार करते हैं तथा सांतवा वृक्ष इस आकृति के केंद्र में रहता है। हालांकि इस विधि को रेखांकन करना थोड़ा मुश्किल है और कृषि कार्यों में भी बाधा आती है। इस विधि में वर्गाकार से 15 प्रतिशत अधिक पौधे लगाए जा सकते हैं।

5. पूरक विधि : यह विधि वर्गाकार विधि का संशोधन है। इस विधि के अनुसार वर्ग के केंद्र में भी एक पौधा उगाया जाता है। इस विधि से वर्गाकार विधि से लगभग दो-गुने अधिक पौधे लगाए जा सकते हैं। इस विधि में यह खास ध्यान रखना चाहिए कि जो केंद्र में पौधा लगाया जाना हो वो तेज़ी से बढ़ने वाला और मुख्य फसल से जल्दी परिपक्व हो। मुख्यत: पपीता, केला, फालसा आदि फल के पौधे वर्ग के केंद्र में लगाने के लिए उचित माने जाते हैं। कुछ वर्षों बाद, जब मुख्य पौधा अपना पूर्ण स्थान ले लेते हैं, तब मध्य पौधे को निकाल दिया जाता है।

गड्ढे खोदना : रेखांकन का कार्य पूरा होने पर अंकित स्थानों पर गड्ढे खोदने चाहिएं। पौधे लगाने के लगभग एक माह पहले गड्ढे खोद लेने चाहियें। गड्ढे उचित दूरी पर 1 मी. x 1 मी. x 1 मी. आकार के खोदे जाते

हैं। गड्ढे खोदने के थोड़े दिन बाद, गोबर की अच्छी सड़ी खाद व 1-1.5 कि.ग्रा. सुपर फास्फेट मिट्टी में मिलाकर गड्ढों को भरना चाहिए। वर्षा ऋतु में पौधे लगाने के लिए मई-जून व बसंत ऋतु में पौधे लगाने के लिए जनवरी के आरम्भ में गड्ढे खोदने चाहिएं।

पौधे से पौधा, कतार से कतार व प्रति एकड़ पौधों की संख्या

क्रमांक	फलदार पौधे का नाम	दूरी (मीटर में)	प्रति एकड़ पौधों की संख्या
1.	कलमी आम, चीकू एवं आवंला	8-9	72-56
2.	आम कलमी (बौनी)	5	156
3.	अमरूद	6-7	110-90
4.	लीची	8	72
5.	पपीता	1.5-2	1742-1054
6.	नाशपाती	7-8	90-72
7.	आड़ू	6	110

पौधे लगाने का समय व चुनाव : हरियाणा में सदाबहार पौधों को लगाने का उचित समय अगस्त-सितम्बर है। इसके अतिरिक्त पौधों को फरवरी-मार्च के महीने में भी लगाया जा सकता है। अच्छे व रोग रहित पौधे प्रमाणित नर्सरी से लेने चाहिएं। पौधे बढ़वार व कद में दर्मियाने तथा पेबन्दी पौधे दो साल से पुराने नहीं होने चाहिएं।

पौधे लगाने की विधि: पौधों को लगाते समय कुछ सावधानियां बरतनी चाहिएं:

1. पौधों को लगाते समय खास ध्यान रखना चाहिए कि मिट्टी के गोले को किसी प्रकार की हानि न पहुंचे। घास-पात (गोले की पैकिंग का सामान) बहुत सावधानी से गोले से अलग करना चाहिए।
2. पौधों को गड्ढों में इस प्रकार रखना चाहिए कि रोपण का जुड़ाव भूमि की सतह से कम से कम 25 सैं.मी. ऊपर हो।
3. पौधे लगाने के तुरंत बाद पानी देना चाहिए।
4. पौधे हमेशा शाम के समय लगाने चाहिएं।
5. पौधे लगाने के बाद बांस व सोटी से सहारा दें।

पौधों की देखभाल : पौधों की अच्छी वृद्धि ले लिए निम्न क्रियाओं का समय-समय पर ध्यान रखना चाहिए :

सिंचाई : पौधों की बेहतर स्थापना के लिए बार-बार सिंचाई करना आवश्यक है। सिंचाई की मात्रा और आवृत्ति, मिट्टी के प्रकार और मौसम की स्थिति पर निर्भर करती है। पौधों को सींचने के लिए उचित तरीका अपनाना चाहिए और यह ध्यान रखना चाहिए कि पानी एक जगह पर अधिक देर तक नहीं ठहरना चाहिए।

निराई-गुड़ाई : यह क्रिया करने से खरपतवारों की वृद्धि रोकने के साथ-साथ हवा का आवागमन भी बढ़ जाता है। अत: उद्यान में उचित समय पर निराई-गुड़ाई करके खरपतवारों को हटाते रहना चाहिए। प्रत्येक सिंचाई के बाद बत्तर आने पर गुड़ाई अवश्य करनी चाहिए।

पौधों को धूप व पाले से बचाना : छोटे पौधों को धूप व पाले से बचाना अति आवश्यक है। पौधों को धूप से बचाने के लिए उन पर उचित छाया का प्रबंध करना चाहिए। पाले से बचाने के लिए शीत ऋतु में पौधों को तीन तरफ से ढक देते हैं और एक कोने से खुला छोड़ देते हैं ताकि पौधे को वायु व प्रकाश उचित मात्रा में मिलता रहे।

वायुरोधक व बचाव के लिए बाड़ : बाग लगाने से पहले जिस तरफ से अधिक तेज हवाएं चलती हैं उस तरफ से वायुरोधक पेड़ लगाने चाहिएं। इसके लिए जंगल जलेबी, अर्जुन, जामुन, शहतूत, जामुन आदि पेड़ वायु रोधक के रूप में लगाएं। वायुरोधक पौधों के बीच में बाड़ लगाएं जिससे जंगली जानवर आदि का रुकाव हो सके। बोगन बेलिया, करौंदा के पौधे बाड़ के लिए उपयुक्त हैं।

बाग लगाने से पहले मिट्टी की जांच

✍ **राकेश कुमार, रीतिका[1] एवं मनोज कुमार शर्मा**
मृदा विज्ञान विभाग
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

हमारे देश में फलदार वृक्षों के बाग तो बहुत मिल जाते हैं, परंतु उनसे पैदावार काफी कम मिल पाती है। इसका मुख्य कारण है पौधों के लिए आवश्यक पोषक तत्वों की पूरी पूर्ति न होना। यदि मिट्टी में किसी तत्व की कमी हो तो उसकी पूर्ति खाद तथा उर्वरकों द्वारा की जानी चाहिए। उर्वरकों की मात्रा का निर्धारण करते समय मिट्टी की उपजाऊ शक्ति, फसल द्वारा अवशोषित किये गये पोषक तत्वों की मात्रा को ध्यान में रखें, यह सब जानने के लिए हमें अपने खेत की मिट्टी की जांच करवाना ज़रूरी है। मिट्टी की जांच से यह भी पता चलता है कि मिट्टी बाग लगाने के लिए सही है या नहीं। परीक्षण से मृदा की समस्या जैसे अम्लीयता, क्षारीयता, लवणता इत्यादि का पता लगता है तथा यदि कोई समस्या है तो उसमें सुधार के लिए सुझाव दिये जा सकते हैं। मिट्टी की जांच के लिए मिट्टी के नमूने खेत से सही ढंग से लिए जाते हैं।

बाग के लिए मिट्टी का नमूना लेने का तरीका : बाग के लिए मिट्टी का नमूना लेने का तरीका फसलों के नमूने लेने के तरीके से अलग है। नमूने बरमे या मृदा ओगर से आसानी से लिये जा सकते हैं।

सबसे पहले 2 मीटर गहरा गड्ढा खोदना चाहिए। फिर सतह से 15, 30, 60, 90, 120, 150 तथा 180 सैं.मी. की गहराइयों पर खुरपी से निशान लगा लें। फिर पहला नमूना ज़मीन की सतह से 15 सैं.मी., दूसरा 15 से 30 सैं.मी., तीसरा 30 से 60 सैं.मी., चौथा 60 से 90 सैं.मी., पांचवां 90 से 120 सैं.मी., छठा 120 से 150 सैं.मी. और सांतवां 150 से 180 सैं.मी. तक की गहराई से अलग-अलग रख लें। प्रत्येक नमूना आधा किलोग्राम के लगभग होना चाहिए। यदि कोई कठोर या रोड़ी वाली परत आ जाये तो उसका नमूना अलग से लें एवं परत की गहराई और मोटाई अवश्य नोट करें। सभी नमूनों को साफ कपड़े या पॉलिथीन की थैलियों में डालें और हर नमूने पर ध्यान से लेबल लगाएं। लेबल पर नमूने की गहराई लिखें व एक लेबल थैली के अंदर रखें एवं एक बाहर बांध दें।

मृदा के नमूने के साथ भेजे जाने वाले सूचना पत्र पर निम्नलिखित जानकारी अवश्य दें, जैसे: 1. किसान का नाम; 2. खेत का खसरा नंबर या नाम; 3. नमूना लेने की तिथि; 4. सिंचाई का साधन; 5. खेत की कोई भी समस्या यदि है तो; 6. पत्र व्यवहार का पूरा पता; 7. भूमि की ढलान; एवं 8. कौन-कौन से पौधे खेत में हैं या खेत में लगाना चाहते हैं।

यह सूचना मिट्टी की रिपोर्ट व खाद संबंधी सिफारिश को अधिक लाभकारी बनाने में सहायक होगी। मिट्टी के नमूनों को नज़दीकी मिट्टी परीक्षण प्रयोगशाला में विश्लेषण के लिए भेज दें।

नमूना लेते समय सावधानियां :

यदि खेत की मिट्टी में अंतर हो तो मिट्टी का नमूना अलग-अलग खेत से लें।

मृदा नमूना खेत के उस स्थान से न लें जहां पर गोबर, खाद अभी डाली हो या जहां गोबर खाद का पहले ढेर लगाया गया हो।

हाल ही में भूमि सुधारक रसायन या उर्वरक प्रयोग किए गए खेत से भी नमूना न लें।

नमूनों को खाद, राख या गोबर के संपर्क में न आने दें।

नमूनों को उर्वरक वाले बोरों पर न रखें।

नमूनों को हवा व छाया में सुखाना चाहिये।

नमूनों को गर्म करके या धूप में न सुखायें।

[1]बागवानी विभाग, चौ.च.सिं.ह.कृ.वि., हिसार

कपास की फसल में बीज एवं मृदा जनित रोग

✍ **अनिल कुमार सैनी एवं धर्मेंदर सिंह**[1]
पादप रोग विज्ञान विभाग
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

कपास भारत की नकदी फसल है जिस पर भारतीय किसान की आशाएं बनी रहती हैं। कपास की फसल में विभिन्न प्रकार के रोगों एवं कीड़ों का प्रकोप आता है परंतु बहुत सारे रोग ऐसे हैं जोकि बीज द्वारा अथवा मिट्टी से उत्पन्न होते हैं। सर्वेक्षण के अनुसार यह पाया गया है कि कपास की फसल में रोग द्वारा होने वाला नुकसान लगभग 3 से 10 प्रतिशत बीज जनित रोगों से होता है और 90 प्रतिशत मृदा से उत्पन्न हुए रोग द्वारा होता है। कपास की फसल में उखेड़ा रोग लगभग 40 से 60 प्रतिशत पाया गया है।

कपास की फसल में जनित रोग

1. बीज गलन : बीज गलन मुख्यत: एसपरजिलस, अल्टरनेरिया, फ्यूजेरियम, पाइथियम, राइजोपस, नामक फफूंद द्वारा उत्पन्न होता है। इसके अतिरिक्त बहुत से ऐसे सूक्ष्म जीवाणु हैं जो इस रोग को बढ़ावा देते हैं। इस रोग का एक कारण यह भी है कि कपास का रखरखाव अच्छे से न किया गया हो। इस रोग से होने वाला नुकसान 3 से 5 प्रतिशत है।

2. पौध रोग : इस रोग में बीज से पौधा निकलने के पश्चात खत्म हो जाता है। फसल में पौधों के मरने से भारी संख्या में नुकसान होता है जोकि बीज एवं मिट्टी से उत्पन्न हुए रोग के कारण होता है। इस रोग में मिट्टी से निकलते हुए तने पर प्रभाव पड़ता है जिसमें तना लाल भूरे रंग का मुरझा जाता है।

3. पौध का झुलसा : पौध का झुलसा रोग अनेक प्रकार के सूक्ष्म जीवों से उत्पन्न होता है। इस रोग में पौध के निकलते हुए पत्तों पर धब्बे नज़र आते हैं। मुख्यत: यह मिट्टी से उत्पन्न हुआ रोग है परंतु इसमें कुछ योगदान बीज जनित भी है। जिसके कारण बीज जमाव के समय ही मर जाता है एवं पौध भी झुलसकर खत्म हो जाती है।

4. जड़ गलन एवं उखेड़ा रोग : यह एक मुख्य रोग है जिसमें पौधे अधिकतर एकदम से मुरझाने लगते हैं और पत्ते झड़ने लगते हैं। इस रोग से ग्रसित पौधा 9 दिन के अंदर पूर्णतया खत्म हो जाता है और आसानी से इसे जड़ से निकाला जा सकता है। जड़ कई टुकड़ों में बंट जाती है। यह रोग पौधे की किसी अवस्था में उत्पन्न हो सकता है। बड़े पौधे में इसके लक्षण पहले नीचे से पत्तों में दिखाई पड़ते हैं जो पीले भूरे हो कर मुरझाकर गिर जाते हैं।

5. जीवाणु अंगमारी : यह रोग बीज द्वारा उत्पन्न होता है। जिसमें पत्तों पर कहीं-कहीं पानी के धब्बे से दिखाई पड़ते हैं। बाद में यह धब्बे स्लेटी रंग के हो जाते हैं और पत्ते कि नसें भूरे रंग की पड़ जाती हैं। 2 से 3 सप्ताह की पौध पर इस रोग का अधिक प्रभाव पड़ता है और यह रोग नमी वाले स्थान पर जल्दी पनपता है।

6. एन्थ्रक्नोज़ : यह एक बीज जनित रोग है जिस के लक्षण पत्तियों के किनारों से शुरू होते हैं। इस रोग में पत्ते की निचली सतह पर गुलाबी व भूरे रंग के धब्बे नज़र आते हैं। इस रोग के बढ़ने से पत्ते मुरझा भी जाते हैं जिससे पौधा मर जाता है। कई बार यह धब्बे आपस में मिलकर रोग ग्रसित क्षेत्र को बढ़ा देते हैं। पत्तों से यह रोग टिंडों पर भी प्रभाव डालता है।

7. हेलिमैथोस्पोरियम राइजोक्टोनिया द्वारा पत्तों का झुलसा रोग: यह रोग बीज व मिट्टी दोनों से ही उत्पन्न होता है। इस रोग में बीज से पौधा निकलने से पहले ही बीज गलन से मर जाता है। इस रोग के लक्षण बहुत सारे गोल भूरे धब्बों के रूप में देखे जा सकते हैं। नए पौधों के निकलते समय यह पीले रंग के धब्बे बढ़कर गहरे भूरे रंग में बदल जाते हैं और तने पर भी नुकसान पहुंचाते हैं। यह बीमारी अधिकतर नमी के मौसम में होती है।

बीज एवं मृदा जनित रोगों से रोकथाम

क. बीज को तेज़ाब से धोना : इस प्रक्रिया में कपास के बीज को सल्फ्यूरिक एसिड द्वारा धोया जाता है। जितना बीज हो उसका दसवां हिस्सा तेज़ाब लेकर बीज को 5-10 मिनट तक धोया जाता है और उसी समय बीज को स्वच्छ पानी से तीन बार धोकर चौथी बार चूने के पानी से धोकर छाया में सुखाया जाता है। यह कार्य किसी प्रशिक्षित व्यक्ति द्वारा ही करना चाहिए अन्यथा सारा बीज खराब होने का डर रहता है। बीज को तेज़ाब द्वारा धोने से लाभ :

1. कच्चा हल्का एवं रोगग्रसित बीज आसानी से अलग किया जा सकता है।
2. बीज के ऊपर रोयें के उतर जाने से इसे बिजाई मशीन द्वारा आसानी से बीजा जा सकता है।
3. प्रति एकड़ बीज की आवश्यकता कम पड़ती है।
4. बीज उपचार करना सरल हो जाता है और उपचार भी अच्छे प्रकार से किया जा सकता है।
5. बीज की बाहरी परत पर उपस्थित जीवाणु मर जाते हैं।
6. तेज़ाब द्वारा धोने से बीज का जमाव अधिक स्वस्थ व जल्दी होता है।

ख. फफूंदनाशक द्वारा बीज उपचार : फसल को अनेक प्रकार के बीज जनित एवं मृदा जनित रोगों से बचाने के लिए फफूंदनाशक द्वारा बीज उपचार किया जाता है। इसमें रोयें वाले बीज को 6-8 घंटे तक एवं रोएंरहित बीज को 2 घंटे तक फफूंदनाशक घोल में रखा जाता है। इसमें बीज रोगरहित हो जाता है एवं काफी हद तक रोगों से छुटकारा पाया जा सकता है।

फफूंदनाशक उपयोग : एमिसान 5 ग्राम एवं स्ट्रप्टोसाइक्लीन 1 ग्राम दस लीटर पानी में घोलकर 4-8 किलोग्राम बीज में उपयोगी है।

ग. जड़ गलन रोग के उपाय:

खेत की गहरी जुताई अति आवश्यक है।
गहरी जुताई के पश्चात खेत में भूसा डालकर उसे सुलगायें।
फसल चक्र अपनायें। खेत को ट्राइकोडरमा द्वारा उपचारित करें।
बीज को 2 ग्राम प्रति किलो की दर से कार्बेन्डाज़िम द्वारा उपचारित करें।

आवश्यक सूचना

''**हरियाणा खेती**'' मासिक पत्रिका के सदस्यों को सूचित किया जाता है कि हम उन्हें उनकी पत्रिका नियमित रूप से भेज रहे हैं, अगर फिर भी किसी सदस्य को उसकी पत्रिका नहीं मिल रही है तो अपने क्षेत्र के डाकिया (पोस्टमैन) से सम्पर्क करें। अगर फिर भी पत्रिका नहीं मिलती है तो आप हमारे कार्यालय में आकर अपने हाथ से पत्रिका को पोस्ट करके अपनी तसल्ली करें।

- सह-निदेशक (प्रकाशन)

[1]कीट विज्ञान विभाग, चौ.च.सिं.ह.कृ.वि., हिसार

हल्दी का संसाधन एवं इसके लाभ

✍ **नेहा, वीनु सांगवान एवं विकास कुमार**[1]
खाद्य एवं पोषण विभाग
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

मनुष्यों की सम्यक आहार व्यवस्था में हल्दी का अपना एक महत्वपूर्ण स्थान है। हल्दी का प्रयोग परिवार में परम्परागत से लेकर आधुनिक रहन-सहन की पृष्ठभूमि में भी यथावत है। हल्दी आध्यात्मिक, व्यावसायिक, औद्योगिक, औषधीय एवं गृह उपयोग के महत्व के कारण भी लोकप्रिय है। विभिन्न प्रकार के गुणों के कारण हल्दी की मांग वृद्धि क्रम में बनी रहती है। हल्दी का सामान्य उपयोग दाल, सब्जी, मांस, मछली, अचार, मक्खन, पनीर, केक एवं जेली में सुगन्ध, रंग औषधीय एवं पोषकता की दृष्टि से किया जाता है। हल्दी का कृमिनाशक गुण एवं पीलापन इसमें उपस्थित करक्यूमिन तत्व के कारण होता है।

हल्दी का संसाधन : हल्दी के संसाधन के लिए हल्दी के कंदों को साफ कर के तुड़ाई करने के उपरान्त मातृ कन्द आकारानुसार छांट कर अलग कर लेते हैं। इस से आकारानुसार उबालने के दौरान एक समय में और एक तरह की हल्दी तैयार होती है। उबालने के लिए दो आयताकार लोहे के पैन या कढ़ाव की आवश्यकता होती है। एक बड़े कढ़ाव जिसमें लगभग 100 लीटर पानी डालकर एक अन्य छेद युक्त हैन्डिल लगा हुआ आयताकार लोहे के कढ़ाव जिस में 50 कि.ग्रा. हल्दी के कन्द रखकर बड़े आकार के कढ़ाव में रखकर उबाला जाता है। उबालते समय बड़े कढ़ाव में हल्दी पानी में पूरी तरह डूबी रहनी चाहिए। हल्दी उबालने के दौरान कढ़ाव के पानी में किसी भी तरह के रासायनिक पदार्थ डालने की आवश्यकता नहीं है। यदि अम्लीय जल है तो उस स्थिति में खाने का सोडा या सोडियम बाई कारबोनेट 100 ग्राम का प्रयोग किया जाता है। हल्दी के कन्दों को तब तक उबालना चाहिए जब तक हल्दी में आया उबाल कम न हो जाए और हल्दी की खुशबू न आने लगे। पूरी तरह उबालने पर हल्दी के टुकड़ों में सलाई डालने पर आर-पार हो जाती है। इस तरह उबालने की प्रक्रिया में करीब 30-40 मिनट का समय लगता है। हैण्डिल से कढ़ाव को उठाकर पानी निथार लेते हैं और इसे 4-5 घंटे के लिए ठंड़ा होने के लिए छोड़ दिया जाता है।

कढ़ाव में अवशेष पानी को फिर से हल्दी उबालने के लिए प्रयोग में लाया जा सकता है। हल्दी को अधिक उबालने से उसकी गुणवत्ता प्रभावित हो सकती है। हल्दी को उबालने के बाद सुखाने के लिए किसी साफ चटाई या फर्श पर डाल कर 10 से 12 दिन सुखाते हैं। समय-समय पर इसे पलटा जाना चाहिए। उबली हुई हल्दी की गांठों को तब तक सुखाना चाहिए जब तक नमी की मात्रा 10-12 प्रतिशत तक न पहुंच जाए।

पॉलिशिंग : बाज़ार में हल्दी की अच्छी कीमत लेने के लिए हल्दी का पॉलिशिंग किया जाना ज़रूरी है जिससे हल्दी आकर्षक व चमकदार हो जाती है। पॉलिशिंग के लिए पीला रंग या हल्दी के पाऊडर को हल्की नमी के साथ किसी ड्रम में हाथ से मिलाकर सुखा लेते हैं। उसके बाद किसी वायुरोधी बड़े डिब्बे में इसका भण्डारण कर सकते हैं। हल्दी को कीटों के प्रकोप से बचाने के लिए नीम के पेड़ की पत्तियों का प्रयोग किया जा सकता है।

हल्दी के लाभ :

रोज़ाना हल्दी का सेवन करने से पर्याप्त मात्रा में कैल्शियम मिलता है। हल्दी का रोगाणुरोधक गुण त्वचा की समस्याओं, संक्रमण, खुजली, मुहांसे आदि के जीवाणुओं को धीरे-धीरे खत्म कर देता है।

(शेष पृष्ठ 20 पर)

[1]सब्जी विज्ञान विभाग, चौ.च.सिं.ह.कृ.वि., हिसार

हरी खाद की उपयोगिता

✍ **सुनील बैनीवाल, देवेंद्र सिंह जाखड़ एवं राहुल कुमार**[1]
कृषि विज्ञान केन्द्र, सिरसा
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

निरंतर फसलें उगाने से हमारी मृदा में जैविक कार्बन तथा अन्य पोषक तत्वों की कमी आती जा रही है। रासायनिक उर्वरक मृदा में पौधों के लिए ज़रूरी पोषक तत्वों की कमी तो पूरी करते हैं पर इसके साथ-साथ यदि जैविक खादों का प्रयोग भी किया जाये तो मृदा की भौतिक दशा भी सुधरती है। कई प्रकार की जैविक खादें जैसे की गोबर खाद, केंचुआ खाद, कंपोस्ट आदि मृदा में मिलाई जा सकती हैं तथा इनकी गुणवत्ता के आधार पर इनके लाभ मृदा तथा फसल को मिलते हैं। जैविक खादों के प्रयोग के बिना टिकाऊ खेती की कल्पना करना संभव नहीं है। इन जैविक खादों में से एक है हरी खाद जिसमें विशेष प्रकार के पौधों को खेत में उगाते हैं तथा लगभग 30 से 40 दिन बाद इनको खेत में मिला देते हैं। ये पौधे विघटित हो कर खाद का काम करते हैं।

हरी खाद के लाभ

मृदा की भौतिक दशा सुधरती है जिसके कारण जलधारण क्षमता बढ़ती है। यह मृदा तथा फसलों को नत्रजन तथा अन्य पोषक तत्व उपलब्ध करवाती है। यह मृदा के जीवांश पदार्थ में वृद्धि करती है। पौधों की जड़ों का फैलाव अधिक होता है। हरी खाद के लिए उगाई हुई फसलों की जड़ों में ग्रंथियां होती हैं जो वायुमंडल में विद्यमान नत्रजन को मृदा में एकत्रित करती हैं जो फसलों के काम आती है।

हरी खाद के लिए फसलों का चुनाव

हरी खाद में प्रयुक्त होने वाली फसलों में सिंचाई की कम ज़रूरत होनी चाहिए। फसलों की जड़ें गहरी होनी चाहिएं ताकि ये मिट्टी को भुरभुरा बनाने के साथ-साथ पोषक तत्वों को ऊपरी सतह पर एकत्रित कर सकें। इन फसलों की वानस्पतिक वृद्धि तीव्र होनी चाहिए ताकि अधिक से अधिक जीवांश पदार्थ मृदा में मिलाया जा सके। इन फसलों के उत्पादन का खर्च भी कम होना चाहिए।

समान्यतया दाल वाली फसलों जैसे कि मूंग, उड़द, ग्वार, लोबिया ढैंचा आदि को हरी खाद के लिए प्रयोग किया जाता है। ढैंचा की वानस्पतिक वृद्धि तीव्र होने तथा वानस्पतिक भाग भी विघटनशील होने के कारण इसे सफलता से हरी खाद के लिए प्रयोग किया जा सकता है। ढैंचा की दो प्रजातियां एक्यूलियाटा तथा रोस्ट्राटा का हरी खाद के लिए सफलता से प्रयोग किया जा सकता है।

लगभग 30 से 40 दिन बाद हरी खाद के लिए बोई गई फसल को मिट्टी में मिला दिया जाता है। अगर देर से मिट्टी में मिलाया जाए तो पौधों का तना तथा अन्य हिस्से सख्त हो जाते हैं तथा उनका विघटन भी आसानी से नहीं होता। हरी खाद खेत में मिलाने के समय खेत में प्रचुर नमी होनी चाहिए। खेत में मिलने के बाद 10 से 15 किलोग्राम यूरिया का छिड़काव करने से पौधों का विघटन जल्दी हो जाता है। एक बार खेत में मिलाए जाने के बाद ये सूक्ष्म जीवों के द्वारा विघटित कर दी जाती है तथा खाद के रूप में फसल को उपलब्ध हो जाती है।

[1]छात्र, एमिटी विश्वविद्यालय, नोएडा

आलू का मूल्य संवर्धन एवं फसलोपरांत प्रबंधन

✍ **कनिका पंवार एवं इंदु पांचाल**[1]
क्षेत्रीय अनुसंधान केन्द्र, करनाल
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

गैर अनाज खाद्य फसलों में आलू का स्थान गेहूं, चावल और मक्का के बाद दुनिया में चौथे नंबर पर है। भारतीय आहार में आलू सबसे लोकप्रिय खाद्य पदार्थों में माना जाता है एवं भारत देश आलू के सबसे बड़े उत्पादकों में से एक है। इसका उपयोग कई तरह से किया जाता है जैसे कि सब्जी, वेफर्स/चिप्स, पाऊडर, फिंगर चिप्स आदि। आलू कंद एक अत्यधिक पौष्टिक भोजन है। यह कार्बोहाइड्रेट, विटामिन सी, खनिज, उच्च गुणवत्ता वाले प्रोटीन व फाइबर आहार प्रदान करता है। आलू स्टार्च का एक समृद्ध स्रोत है और इसका मुख्य रूप से सेवन अधिक कैलोरी मान होने के कारण किया जाता है। इसमें फॉस्फोरस, कैल्शियम, लौह तत्व और कुछ विटामिन भी होते हैं। आलू उबालने से उनकी प्रोटीन की मात्रा बढ़ जाती है व कैल्शियम की मात्रा भी लगभग दोगुनी हो जाती है।

आलू का उपयोग सब्जी के रूप में किया जाता है व इसका उपयोग विभिन्न रूपों जैसे स्टार्च, आटा, शराब डेक्सट्रिन व पशु चारा बनाने के लिए भी किया जाता है। यह अनुमान है कि लगभग 25 प्रतिशत आलू जो कई कारणों से खराब हो जाता है, प्रसंस्करण और संरक्षण की विधि द्वारा विभिन्न प्रकार के प्रसंस्कृत उत्पादों के निर्माण से सुरक्षित किया जा सकता है। आलू को वेफर्स/चिप्स, पाऊडर, फ्लेक्स, ग्रैन्यूल्स, कैनिंग स्लाइस के रूप में संरक्षण और मूल्य संवर्धन के लिए संसाधित किया जाता है। आलू के ग्रैन्यूल्स का उपयोग विभिन्न व्यंजनों की तैयारी के लिए किया जाता है व इससे सब्जी और गैर-व्यंजनों को बनाने एवं खाद्य मूल्य को समृद्ध करने के लिए भी करते हैं। आलू के प्रति 100 ग्राम पोषक तत्वों में पानी, ऊर्जा, प्रोटीन, वसा एवं कार्बोहाइड्रेट की 79 ग्राम, 322 किलोजूल, 2 ग्राम, 0-09 ग्राम व 17 ग्राम मात्रा होती है तथा आलू में कैल्शियम 12 मि.ग्रा., लौह 0-78 मि.ग्रा., फॉस्फोरस 57 मि.ग्रा. व विटामिन सी 19-7 मि.ग्रा. होता है।

आलू के संभावित मूल्य वर्धित उत्पाद

भारत में आलू एक बहुत ही लोकप्रिय पारंपरिक मूल भोजन है। कई मूल्यवर्धित उत्पादों को भारतीय आहार में भी शामिल किया गया है। आलू की सब्जी, बटाटा वड़ा और समोसा उन में से एक है। आलू का प्रयोग फास्ट फूड आइटम जैसे कि आलू की चाट के रूप में एक प्रमुख रूप से किया जाता है। उत्तरी भारत में दम आलू व आलू का पराठा एक पसंदीदा आहार है। दक्षिण भारत में मसाला डोसा नामक व्यंजन पूरे भारत में बहुत उल्लेखनीय है। दक्षिण भारत में खास तौर पर तमिलनाडु में पूड़ी का सेवन मसाले दार आलू के साथ किया जाता है। अन्य पसंदीदा व्यंजन हैं आलू टिक्की और आलू का पकोड़ा। वड़ा पाव भारत में मुंबई और महाराष्ट्र के अन्य क्षेत्रों में एक लोकप्रिय शाकाहारी फास्ट फूड व्यंजन है। आलू पोस्टो (आलू और खसखस के साथ एक करी) पूर्वी भारत, खासकर बंगाल में बहुत लोकप्रिय है। हालांकि आलू भारत का मूल निवासी नहीं है, लेकिन यह पूरे देश में खासतौर पर उत्तर भारतीय भोजन की तैयारी का एक महत्वपूर्ण हिस्सा बन गया है। आलू के अन्य उत्पादों में फ्रेंच फ्राइज़, चिप्स और सनैक्स, निर्जलित आलू उत्पाद, आलू स्टार्च और अन्य आलू उत्पाद शामिल हैं।

मनुष्यों द्वारा खाने के अलावा आलू का उपयोग

आलू का उपयोग अल्कोहल युक्त पेय जैसे वोडका, पोइटिन या अक्विविट का उपयोग करने के लिए किया जाता है। उनका उपयोग पशुओं के चारे के रूप में भी किया जाता है। पशुधन-श्रेणी के आलू जो बहुत छोटे आकार व धब्बे युक्त होने की वजह से व जिन्हें मानव उपयोग के लिए बेचा नहीं जा सकता लेकिन चारे के उपयोग के लिए उपयुक्त माना जाता है, उन आलुओं को पशुओं के लिए चाट के रूप में इस्तेमाल करते हैं। उपयोग करने तक उन्हें डिब्बे में संग्रहीत किया जाता है। कुछ किसान आलुओं को कच्चा खिलाने के बजाय उन्हें भाप कर देना पसंद करते हैं। आलू के स्टार्च का उपयोग खाद्य उद्योग में सूप और सॉस के लिए थिकनेर व बाइंडर के रूप में, कपड़ा उद्योग में एक चिपकने वाले पदार्थ के रूप में, और पेपर व बोर्ड बनाने में इसका प्रयोग किया जाता है। काफी कंपनियां प्लास्टिक उत्पादों में उपयोग के लिए अपशिष्ट आलू का इस्तेमाल पोलीलैक्टिक एसिड प्राप्त करने की संभावनाएं तलाश रही हैं। अन्य शोध परियोजनाएं बायोडिग्रेडेबल पैकेजिंग के आधार के रूप में आलू के स्टार्च का उपयोग करने के तरीकों को भी तलाश रही हैं। भारत में आलू की खाल को शहद के साथ लगाने से जले हुए को ठीक करने का उपचार किया जाता है। भारत में बर्न सेंटर ने उपचार करते समय जलने से बचाने के लिए आलू की पतली बाहरी त्वचा की परत का उपयोग किया है।

आलू का फसलोपरांत प्रबंधन

आलूमें फसल के बाद के नुकसान का प्रबंधन करने के लिए कई चरणों का ध्यान रखना ज़रूरी है। कटाई से पहले का ऑपरेशन सही तरीके से करना व समय पर रसायन लगाकर फसल को रोग मुक्त किया जाना चाहिए। आलू की कटाई के बाद के प्रबंधन के लिए गुणात्मक और मात्रात्मक नुकसान को कम किया जाना चाहिए व उचित देखभाल के माध्यम से उपायों को अपनाना चाहिए। फसल की कटाई तथा खाद्य फसल को नुकसान से बचाने के लिए तैयार किए गए उपकरणों के साथ कटाई की जानी चाहिए। छंटाई और ग्रेडिंग समझदारी से की जानी चाहिए। भंडारण विशेष तापमान और आर्द्रता पर किया जाना चाहिए। अधिकतम आलू मौसम के दौरान अंतराल से बचने के लिए विपणन उचित समय पर करना ज़रूरी है। प्रसंस्करण के लिए आलू के इस्तेमाल हेतु उनका पूर्व निर्धारण किया जाना चाहिए। आलू के उचित प्रबंधन के लिए इन उपर्युक्त कदमों का ध्यान रखना आवश्यक है।

आलू के मूल्य संवर्धन से किसान सशक्तिकरण

किसानों को सशक्त बनाने के लिए उन आलू की किस्मों को बढ़ावा देने की आवश्यकता है जो उत्पाद विकास को सबसे ज़्यादा बढ़ाने में मुख्य भूमिका निभाती हों। आलू कम लागत वाली सब्जी की फसल है, इस प्रकार मूल्यवर्धन को शामिल करने से फसल के बाद के नुकसान (जो कि आलू में 25 प्रतिशत है) को कम किया जा सकता है। इस प्रकार मूल्यवर्धन के माध्यम से आलू के उत्पाद बनाकर बढ़े हुए राजस्व से किसानों को लाभान्वित किया जा सकता है। दूसरी ओर आलू की विशिष्ट किस्मों को उगाना जो कि खाद्य उद्योग द्वारा आवश्यकता में लायी जाती हो। इस तरह आलू में मूल्य संवर्धन बहुत ही महत्वपूर्ण है।

[1]लुवास, हिसार

बागवानी फसलों की गुणवत्ता मूल्यांकन के लिए गैर-हानिकारक इमेजिंग तकनीक

✍ **सचिन, वी. के. सिंह एवं सुशांत भारद्वाज**
प्रसंस्करण एवं खाद्य अभियांत्रिकी विभाग
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

भारत में बागवानी क्षेत्र में निर्यात की उच्चतम क्षमता बागवानी वनस्पतियों, कृषि-जलवायु परिस्थितियों की व्यापक विविधता के कारण है। भारत की निर्यात क्षमता बाकी फल उत्पादक देशों के मुकाबले काफी स्थिर है। बागवानी उपज के बाद मार्केटिंग एक महत्वपूर्ण कदम है। यह सबसे जटिल मुद्दों में से एक है जो निर्यात के सही इस्तेमाल के लिए कुशल समाधान प्रदान करता है। बाज़ारों के वैश्वीकरण (ग्लोबलाईज़ेशन) को जारी रखने की संभावना है क्योंकि आपूर्ति को विज्ञान और प्रौद्योगिकी के साथ हमेशा से जोड़ा जाता रहा है। बागवानी फसलों की आंतरिक गुणवत्ता उपभोक्ताओं और निर्यात व्यापारियों के लिए एक चिंता का विषय है। भारत में उच्च स्तर पर उगने वाले कृषि उत्पाद जैसे कि आम की फसल जिसमें विभिन्न दोष जैसे स्पंजी ऊतक, (वीविल्स) कीट क्षति या लार्वा भक्षण की क्षति, मामूली क्षय का दौरा, सिकुड़न, और रंग बिगाड़ना आम तौर पर पाई जाती हैं। इसी तरह आलू की फसल में भी काला दिल, खोखला दिल, आंतरिक ब्राउनिंग, काले धब्बे, फुसैरियम विल्ट, कवक और चिलिंग इंजरी आम तौर पर पाई जाती है। ये विभिन्न दोष आमतौर पर अधिकांश फलों और सब्जियों में पाए जाते हैं। इन बीमारियों का पता न लगने के कारण किसानों को पैदावार का उचित दाम नहीं मिल पाता और उन्हें मज़बूरन सस्ते दामों पर इसे बेचना पड़ता है। भारत में फल और सब्जियों के निर्यात में गिरावट को सरकार के मानदंडों में लगातार बदलाव के लिए ज़िम्मेदार ठहराया जा सकता है। इस बीच, दुनिया के सभी बड़े और छोटे देशों ने यूरोपीय संघ द्वारा निर्धारित कड़े गुणवत्ता मानदंडों को अपनाना शुरू कर दिया है। इन मापदंडों पर खरे उतरने में भारतीय किसान को कई बाधाओं का सामना करना पड़ रहा है।

बैंगन का आंतरिक रंग बिगाड़ना

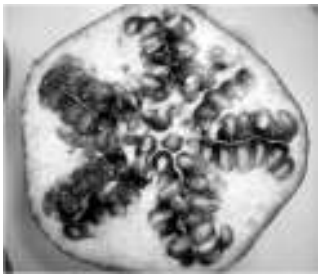

अनार में अंदरूनी गलन

बागवानी फसलों में अंदरूनी गड़बड़ी का पता लगाने और पूर्व-कटाई अवधि के दौरान इसके नियंत्रण के लिए कोई सिद्ध तकनीक नहीं है। आंतरिक विकार मानव आंखों को दिखाई नहीं देते हैं और शारीरिक रूप से दोष-संक्रमित फलों और सब्जियों का पता लगाना संभव नहीं है। अब तक, कुछ देशों ने इस कारण से भारतीय उपज पर प्रतिबंध लगा दिया है। इस स्थिति में किसान बागवानी फसलों में निवेश नहीं करना चाहते। ऐसी परस्थिति में, अच्छी गुणवत्ता वाली फसलों की ग्रेडिंग और छंटाई के लिए गैर-हानिकारक तकनीकों की सख्त आवश्यकता है। आजकल दोष का पता लगाने के लिए विभिन्न इमेजिंग तकनीक उपलब्ध हैं और इनका उपयोग ऐसी समस्या को हल

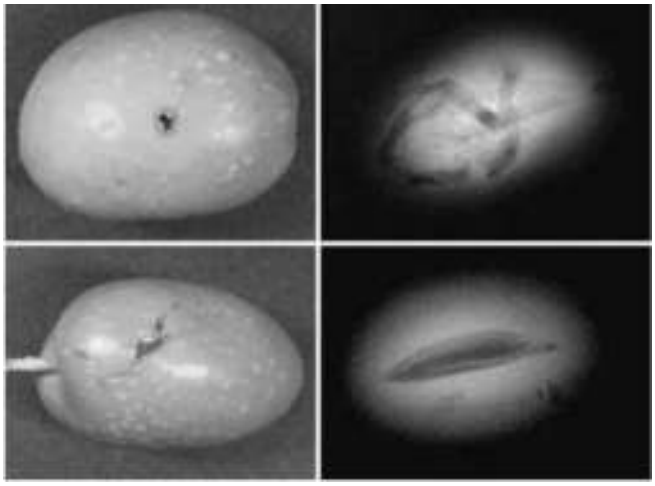

जैतून के फल की डिजिटल तस्वीरें और एक्स-रे चित्र, फ्रूट फ्ला संक्रमण (शीर्ष) और बिना संक्रमण (नीचे)

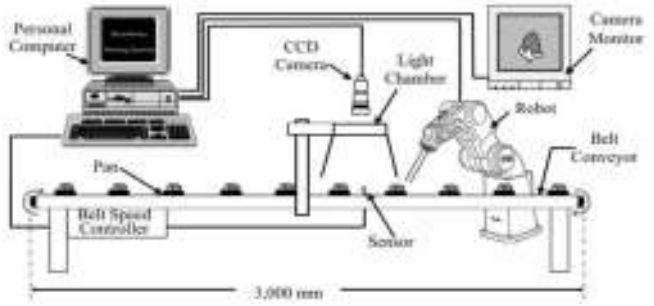

स्वचालित स्ट्रॉबेरी छँटाई प्रणाली

करने में प्रभावी रूप से किया जा सकता है।

गैर-हानिकारक इमेजिंग तकनीक फल और सब्जियों के आंतरिक भागों के प्रतिरूप को बाहर से देखने में मदद करती है, जिनका उपयोग फल सब्जियों की गुणवत्ता मूल्यांकन के लिए किया जा सकता है। आजकल मुख्य रूप से उपयोग की जाने वाली तकनीकों में चुंबकीय प्रतिध्वनि/चुंबकीय प्रतिध्वनि इमेजिंग (मैगनेटिक रेजोनेंस इमेजिंग) शामिल हैं, जो चुंबकीय प्रतिध्वनि उपकरणों में शक्तिशाली चुंबकीय क्षेत्र उत्पन्न करते हैं, जो फलों और सब्जियों के विभिन्न टिशुओं में मौजूद के हाइड्रोजन न्युक्ली को एक दिशा में करने में सक्षम होते हैं। इसमें अधिक मुक्त पानी वाले क्षेत्र आस-पास के टिशुओं की तुलना में उज्ज्वलित हो जाता है, जिस से वाटर कोर, कोर ब्रेकडाउन, चिलिंग इंजरी, बरुईसिंग का पता लगया जा सकता हैं, नियर इंफ़्रा-रेड रेफ्लेक्टॉन्स स्पेक्ट्रोस्कोपी में खाद्य पदार्थों की आर्गेनिक मोलेक्युल्स के साथ इंटरैक्शन क्रिया, मोलेक्युल्स द्वारा सोखे हुए प्रकाश की तरंग इसके प्रकार (जैसे शुगर, स्टार्च, फैट, पिग्मेंट आदि) के बारे में जानकारी देता है, फलों के पकने की क्रिया के दौरान ही अंदरूनी हानि का पता लगने से किसानों को इनके रख रखाव और छटाई में बहुत मदद मिलती है; डायनामिक तकनीक जैसे की वाइब्रेटेड एक्साइटेशन उत्पाद के नमूने की सुनाई या गैर सुनाई देने योग्य फ्रीक्वेंसीज़ का उपयोग करती है, जो कंपन द्वारा प्रतिक्रिया करता है, यह कुछ फलों और सब्जियों (सेब, खरबूजे, आड़ू, टमाटर आदि) की दृढ़ता और पकने की अवस्था को मापता है; अल्ट्रासोनिक तकनीक फलों में ऊर्जा संचरण और प्रतिक्रिया ऊर्जा के मूल्यांकन पर आधारित है। इस प्रणाली का परीक्षण अल्ट्रासोनिक ट्रांसड्यूसर की जोड़ी जिसमे एक संचरित के रूप में और दूसरा रिसीवर के रूप में कार्य करता है। (शेष पृष्ठ 19 पर)

वैज्ञानिक विधि से बाग लगाएं

✍ **सुलेमान मोहम्मद एवं विरेंद्र सिंह**
क्षेत्रीय अनुसन्धान केंद्र (बागवानी), बुड़ीया, यमुनानगर
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

बागों के फल वृक्षों से कई सालों तक फसल प्राप्त होती है, इसलिए अगर बाग लगाते समय कोई चूक हो जाती है तो सालों तक उससे हानि उठानी पड़ती है। अत: वैज्ञानिक विधि से बाग लगाना चाहिए जिससे अधिक से अधिक लाभ प्राप्त किया जा सके। नया बाग लगाते समय निम्नलिखित बातों का ध्यान रखें :

बाग लगाने के स्थान का चुनाव

बाग में लगाने वाले वृक्षों का चुनाव उष्ण, उपोष्ण एवं समशीतोष्ण जलवायु के अनुसार करना चाहिए।

मृदा बाग का आधार होती है, इसलिए बाग के लिए चयनित स्थान की मिट्टी की जाँच अवश्य करायें। दोमट व बलुई मिट्टी बाग के लिए अच्छी होती है। भूमि में 2 मीटर की गहराई तक कोई कठोर एवं कंकरीली तह नहीं होनी चाहिए। बाग लगाने के स्थान पर धरातल समतल होना चाहिए।

बाग की सिंचाई के लिए इस्तेमाल करने वाले पानी की जाँच अवश्य कराएं जिससे पता चल सके कि उस जगह पर किस तरह के बाग लगाये जा सकते हैं। भूमि में जल स्तर लगभग 3 मीटर नीचे होना चाहिए। बाग लगने वाले स्थान पर जल भराव नहीं हो और जल निकास का उचित प्रबन्ध होना चाहिए।

बाग के लिए कीट व बीमारियों से रहित स्थान का चुनाव करें।

बाग लगाने के स्थान पर बाज़ार एवं यातायात की समुचित व्यवस्था होनी चाहिए तथा उद्यान कार्यों के लिए सस्ते एवं निपुण मज़दूर उपलब्ध होने चाहिएं।

फल वृक्षों का चयन एवं खरीद

बाग लगने वाले क्षेत्र की जलवायु, मिट्टी की गुणवत्ता व पोषण स्तर, पानी की गुणवत्ता, सिंचाई का प्रकार एवं जल निकास आदि का ध्यान रखते हुए फल वृक्षों का चयन करें।

हमेशा कलमी पौधे ही लगाएं। पौधे कीट एवं बीमारियों से मुक्त होने चाहिएं। पौधे नर्सरी से मिट्टी की पिंडी सहित निकालें ताकि परिवहन के दौरान कम से कम नष्ट हों।

कलमी पौधों का रूट स्टोक भूमि तथा विषम परिस्थितियों के अनुरूप हो तथा बीज द्वारा तैयार किया गया हो।

पौधों को स्थानीय, विश्वसनीय एवं प्रमाणित नर्सरी से ही खरीदें। नर्सरी का भ्रमण कर के पहले पौधों की प्रजातियों की जानकारी लें। प्रजाति का नाम खुद न बताएं बल्कि उपलब्ध प्रजातियों का नाम एवं उनकी खूबियां पूछें।

अच्छी किस्म के ज़्यादा पैदावार देने वाले कलमी पौधों का चुनाव करें एवं पौधों को समय पर बुक कराएं।

नर्सरी में लम्बे समय तक रखे गए ज़्यादा उम्र के पौधों को न खरीदें।

नर्सरी से तुरन्त निकाले गए जड़ कटे हुए पौधों को कभी न खरीदें।

कलमी पौधों की शाख की उम्र 1-2 साल से ज़्यादा न हो एवं बढ़वार अवरुद्ध न हुई हो।

मूल वृत्त एवं शाख का जोड़ स्पष्ट व ज़्यादा ऊंचाई पर न हो।

कलमी पौधों को पहचानने के लिए वानस्पति विधि द्वारा पौधे तैयार करने की तकनीकी जानकारी होनी चाहिए।

पॉलीथीन बैग में तैयार पौधों को वरीयता दें।

नर्सरी से पौधे उठाने के 1-2 दिन पहले हल्की सिंचाई करें तथा सदाबहारी पौधों की कुछ पत्तियों को तोड़कर वाष्पोत्सर्जन को नियंत्रित कर सकते हैं। सदाबहारी पौधों की मिट्टी के गोले के साथ तथा पर्णपाती पौधों को सुषुप्तकाल में किसी तरह निकाला जा सकता है।

मिट्टी का गोला (अर्थ बाल) अच्छी तरह घास/मूंज में बंधा हो ताकि जड़ें ठीक रहें।

पौधों को परिवहन के समय टोकरियों में या सीधे लादकर लायें। पौधों को लादते समय अर्थबाल को न टूटने दें। अगर रास्ता लम्बा हो तो पौधों को बीच में पानी दें तथा दिन में तेज़ धूप के समय छाया करें।

पौध रोपण का समय

उष्ण एवं उपोषण जलवायु के पौधों को बरसात के समय जुलाई से सितम्बर मास तक लगाते हैं। बसंत ऋतु में भी रोपण किया जा सकता है लेकिन अधिक देख-रेख की ज़रूरत होती है। समशीतोष्ण फल वृक्षों का रोपण दिसम्बर से फरवरी मास तक करना अच्छा होता है। पौधरोपण सायंकाल के समय करें।

पौधरोपण की विधि

सबसे पहले बाग लगने वाले चयनित स्थान की अच्छी तरह सफाई करें एवं पौधों के उचित विकास के लिए ज़रूरी रेखांकन विधि का चुनाव करें।

बाग स्थापना के 1-2 माह पूर्व 1 x 1 x 1 मीटर आकार के गड्ढे आवश्यक दूरी के अनुसार खोदें।

एक महीने तक गड्ढे खुदे रहने के बाद 50 कि.ग्रा. गोबर की अच्छी तरह गली-सड़ी खाद तथा आवश्यकता अनुसार उर्वरक व मिट्टी मिलाकर भूमि के स्तर से थोडा ऊपर तक भरते हैं ताकि सिंचाई के बाद समतल हो जाए। मिट्टी की जांच के आधार पर ही उर्वरकों का प्रयोग करें।

पौधों को दीमक से बचाने के लिए क्लोरपाईरिफॉस की मात्रा 50-100 मि. ली. प्रति गड्ढा मिलाएं।

गड्ढों की खुदाई करते समय आधा मीटर गहराई तक की मिट्टी एक तरफ तथा निचली आधा मीटर गहराई की मिट्टी दूसरी तरफ डालते हैं तथा भरते समय ऊपर की मिट्टी नीचे तथा नीचे वाली मिट्टी खाद मिला कर ऊपर भर देते हैं।

बाग के पश्चिम तथा उत्तर दिशा में लू एवं शीत लहर से बचाव के लिए वायुरोधक पौधों का रोपण करें।

पौध रोपण के समय पौधे को पिंडी से थोड़ा अधिक गाड़ना चाहिए।

अच्छे परागकण के लिए परागकर्ता पौधों का भी रोपण करना चाहिए।

पौधों की रोपाई के बाद तुरंत सिंचाई करें तथा कुछ समय बाद आवश्यकतानुसार सिंचाई करें।

स्प्रेयर का रख-रखाव : कैसे

✍ **विनोद कुमार, नरेंद्र एवं सुशील कुमार**
फार्म मशीनरी और पावर इंजीनियरिंग विभाग
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

स्प्रेयर की अच्छी देखभाल करने से न केवल उसकी आयु बढ़ जाती है बल्कि उसका रख-रखाव का खर्चा भी कम हो जाता है। यह हर कोई जानता है कि जब आप किसी चीज़ की देखभाल करते हैं, तो वह लंबे समय तक सही काम करती है। उचित साफ-सफाई से विभिन्न फसलों पर प्रयोग किए जाने वाले रसायनों की आपसी क्रिया से हुए नुकसान से फसल को सुरक्षित रखा जा सकता है। यह लेख आपको स्प्रेयर का उपयोग करने से पहले और बाद में अपने स्प्रेयर को सही स्थिति में बनाए रखने के लिए उचित दिशा-निर्देश सिखाती है।

स्प्रेयर का रख-रखाव : स्प्रेयर के रख-रखाव के लिए निम्नलिखित बातों का ध्यान रखें :

1. पंप की देखभाल : पहली बार चलाने से पहले पंप में से साफ पानी गुज़ार लें ताकि पंप, होज़, फिल्टर और नोज़ल आदि से धूल-मिट्टी, काई, तलछट बाहर निकल जाएं। पंप अगर काम न कर रहा हो तो इसका कारण जंग लगना या तलछट का जमाव होना हो सकता है। इसको साफ करने हेतु निर्माता के सुझाए हुए रसायनों का प्रयोग भी कर सकते हैं। पिस्टन पंप जो कि हरियाणा में अधिकतर स्प्रेयर में लगा होता है, में वॉल्व, वॉल्व सीट, ओ-रिंग्स, प्लंजर कप, सिलिंडर और सीलिंग गैस्केट की जांच करें। पंप में अगर तेल की मात्रा निर्धारित निशान से कम है तो इसमें और तेल भरें।

2. होज़ : होज़ के सभी जोड़ों की संभावित दरारों हेतु ध्यान से जाँच करें। सभी होज़ में पंप द्वारा पैदा किये गए अधिकतम दबाव को सहन करने की शक्ति होनी चाहिए। कभी भी छोटे छिद्र वाली होज़ का प्रयोग न करें। सक्शन होज़ का व्यास कम से कम पंप के इनपुट नली के व्यास से अधिक होना चाहिए।

3. फिल्टर या स्ट्रेनर : फिल्टर टैंक की इनपुट नली, टैंक और पंप के मध्य, पंप के बाद और नोज़ल में लगे होते हैं। अगर फिल्टर में कोई पदार्थ का जमाव नजर आता है तो फिल्टर के साथ-साथ टैंक और सभी होज़ को साफ करें। फिल्टर को साफ करने के लिए नरम बालों वाले ब्रश का भी प्रयोग किया जा सकता है।

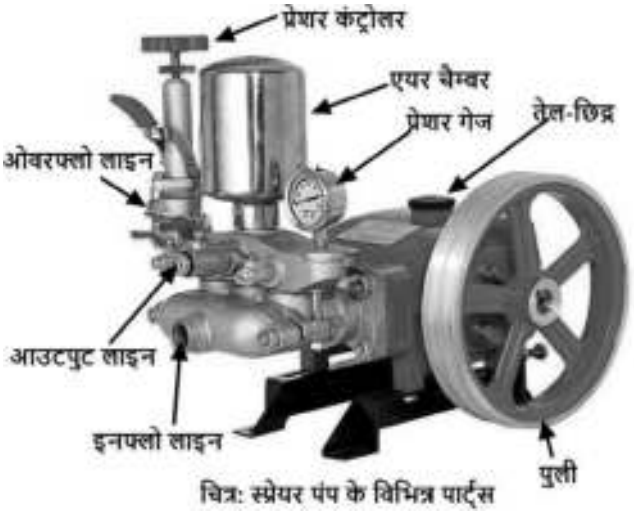

चित्र: स्प्रेयर पंप के विभिन्न पार्ट्स

4. रेगुलेटर : स्प्रेयर रेगुलेटर को साल में एक बार अवश्य चेक करें। रेगुलेटर की पैकिंग को अधिक टाइट करने से प्रेशर बहुत अधिक हो सकता है और ज़्यादा ढ़ीली रहने से लीकेज की समस्या हो सकती है।

5. प्रेशर गेज: दबाव को सही नापने के लिए अधिकतम दबाव के दोगुने माप वाली प्रेशर गेज का प्रयोग करें। जहां तक संभव हो तेल वाली प्रेशर गेज का ही प्रयोग करें। नोज़ल को हटा कर भी प्रेशर को मापा जा सकता है।

6. बेल्ट और पीटीओ: बेल्ट के तनाव और टूट-फूट की जांच करें। पीटीओ का जोड़ों में ग्रीस करें। पीटीओ और बेल्ट के सुरक्षा-ढक्कन लगें होने चाहिएं।

7. एजीटेटर: अगर एजीटेटर सही काम न कर रहा हो तो स्प्रे पदार्थ आपस में अच्छी तरह घुल नहीं सकते हैं। मैकेनिकल एजीटेटर में ब्लेड, शाफ्ट का साथ मज़बूती से लगे होने चाहिएं। शाफ्ट के बेयरिंग में ग्रीस नियमित रूप से करना चाहिए। हरियाणा में स्प्रेयर निर्माता मुख्यत: अलग से एजीटेटर नहीं लगाते हैं। इनमें ओवरफ्लो डिस्चार्ज वाल्व की होज को ही एजीटेटर के रूप में प्रयोग करते हैं।

8. नोज़ल : नोज़ल के नाजुक सिरे को साफ करने के लिए हल्के बालों वाले ब्रश का प्रयोग करना चाहिए। धातु के तारों या लकड़ी के डंडियों का प्रयोग करने से नोज़ल खराब हो सकती है। नई नोज़ल को प्रयोग करने से पहले उसकी क्षमता जाँच लेनी चाहिए।

स्प्रेयर की धुलाई-सफाई कैसे करें?

1. स्प्रेयर के पहले उपयोग से पहले : स्प्रेयर को पहली बार उपयोग करने से पहले एक दृश्य-निरीक्षण कर लेना चाहिए। सभी होज के जोड़, फिटिंग, दरार आदि की भली-भांति जांच कर लें। सभी फिल्टर को साफ कर लें। टैंक के अंदर भी देख लेना चाहिए कि कोई कीट-पतंगा अंदर न चला गया हो। यह पंप या होज में फंस सकता है।

2. स्प्रेयर को प्रयोग करने के बाद : प्रयोग करने के बाद स्प्रेयर को साफ कर लेना चाहिए। स्प्रेयर को साफ करने से पहले उपकरण निर्माता के दिशा-निर्देशों को ध्यानपूर्वक पढ़ें। इसके बाद जो भी कीटनाशक का स्प्रे हुआ हो, उसके प्रयोग करने के लिए दिए गए विशेष निर्देशों का अनुपालन सुनिश्चित करें। एक आदर्श नियमावली के अनुसार स्प्रेयर को प्रयोग करने के बाद दिन के अंत में अवश्य साफ करें चाहे अगले दिन भी उसी कीटनाशक का प्रयोग होना हो। अगर कीटनाशक को बदलना हो तो इसे नए कीटनाशक का प्रयोग करने से पहले भी साफ करें। ऐसा न करने पर पुराना कीटनाशक नए कीटनाशक के प्रभाव को कम कर सकता है और फसल को भी नुकसान पहुंच सकता है। इससे स्प्रेयर के पार्ट्स खराब हो सकते हैं और यह ऑपरेटर के लिए भी हानिकारक सिद्ध हो सकता है।

किसी भी स्प्रेयर को साफ करने के स्थिति-विशेष के अनुसार दो तरीके हो सकते हैं- एक जब एक ही तरह के कीटनाशक का प्रयोग दो अवसरों पर किया जाए और दूसरा जब कीटनाशक को बदल दिया जाए। इन दोनों तरीकों में एक प्रक्रिया समान है- तिहरी धुलाई।

तिहरी धुलाई करने का तरीका : अगर स्प्रेयर टैंक खाली दिख रहा हो तो भी स्प्रेयर में कई लीटर कीटनाशक का घोल हो सकता है। स्प्रेयर टैंक को एक बार अधिक पानी के साथ धोने की बजाय कम पानी की मात्रा के साथ कई बार धोना अधिक फायदेमंद होता है। पानी की कम मात्रा में धुलाई हमेशा ही फायदेमंद नहीं रहती है, इसलिए एक बार कीटनाशक के साथ आई पत्रिका को पढ़ लेना चाहिए।

स्प्रेयर की तिहरी धुलाई करने का तरीका इस प्रकार है :

1. टैंक में उसकी क्षमता का दस प्रतिशत पानी भरें और इसको 10 मिनट तक पूरे स्प्रेयर में घुमाएं। हर कंट्रोल वॉल्व को खोलें और बंद करें।
2. एक अलग टैंक में साफ पानी को रखें और स्प्रेयर के बाहरी हिस्से में लगे हुए कीटनाशक के बचे हुए भाग को धो दें। यह धुलाई उचित व्यक्तिगत सुरक्षा उपकरण पहनने के बाद ही करें। जहाँ तक संभव हो, यह धुलाई उसी खेत में करें जहाँ कीटनाशक का छिड़काव किया गया हो। इस कीटनाशक मिले पानी को नोज़ल द्वारा फसल पर भी छिड़का जा सकता है बशर्ते यह सिफारिश की हुई मात्रा से अधिक न हो।
3. इसके बाद, स्प्रेयर को उस स्थायी स्थान पर ले जाएँ जहाँ पर इसमें कीटनाशक भरा जाता है। यहाँ पर इसकी दो बार और (कुल तीन बार) धुलाई करें। धुलाई के बाद गन्दे पानी को जलमार्ग, जल निकासी प्रणाली या कुएं में कदापि न जाने दें।

धुलाई करने का पहला तरीका : जब एक जैसे उत्पाद प्रयोग कर रहे हों :

1. कीटनाशक के छड़काव की योजना इस तरह से बनाएं कि अंत में पूरा कीटनाशक घोल प्रयोग हो जाए। कभी भी टैंक में पूरी रात कीटनाशक का घोल न छोड़ें।
2. तिहरी धुलाई करें जैसे की पहले बताया गया है।
3. सक्शन, इन-लाइन और फिल्टर स्क्रीन को निकालें, निरीक्षण करें और साफ करें। साफ होने के बाद वापिस लगा दें।
4. नोज़ल के अगले हिस्से और उसकी छलनी को निकालकर साफ करें और वापिस लगा दें।

धुलाई करने का दूसरा तरीका : इस तरीके को तब प्रयोग में लाएं जब उत्पाद (कीटनाशक या अन्य रसायन) बदल रहे हों या स्प्रेयर को अगले मौसम में प्रयोग करने हेतु स्टोर में रख रहे हों :

1. इसमें धुलाई करने वाले पहले तरीके के 1-4 तक चरणों को दोहराएं।
2. इसके बाद टैंक को साफ पानी और डिटर्जेंट जो कि निर्माता द्वारा अनुसंशित किया गया हो, से भरें। अगर निर्माता द्वारा कोई भी डिटर्जेंट न सुझाया गया हो तो कम झाग वाला या क्षारीय क्लीनर का उपयोग करें। ब्लीच का प्रयोग न करें।
3. एजीटेटर या ओवरफ्लो डिस्चार्ज वाल्व को पूरा खोल कर चलाएं और कम से कम 5 मिनट पानी को सारे स्प्रेयर में घुमाएं।
4. इसके बाद स्प्रेयर को खाली कर दें।
5. इस प्रक्रिया को 2-4 चरणों तक दोहराएं।

यदि सिर्फ कीटनाशक बदलते हैं, तो नोज़ल की छलनी और अग्रभाग को वापिस लगा दें।

स्प्रेयर को स्टोर करते समय, अगर संभव हो तो, एजीटेटर के साथ 5 मिनट तक जंगरोधक घोल को चलाएं और इसे पंप द्वारा निकाल दें। इस घोल को स्प्रे गन या लांस से न गुज़ारें। वाल्वों को खुला छोड़ दें और टैंक का ढक्कन ढीला रखें। प्लास्टिक के हिस्सों को धूप से बचाएं। थोड़े समय के लिए गैर-संक्षारक तरल पदार्थ को पंप में छोड़ा जा सकता है, लेकिन इसके लिए हवा को बाहर निकाल दें। खुले हुए छिद्रों को सील कर दें।

अंत में अपने स्प्रेयर को स्वस्थ रखने का मतलब है कि यह लंबे समय तक चलेगा। यदि आप इन स्प्रेयर रखरखाव के सरल चरणों का पालन करते हैं, तो आपको छिड़काव करते समय कम टूट-फूट का सामना करना पड़ेगा।

ब्रिकेटिंगः धान के भूसा प्रबंधन का एक अच्छा विकल्प

✍ **यादविका, कमला मलिक एवं एम. के. गर्ग**
प्रसंस्करण एवं खाद्य अभियांत्रिकी विभाग
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

पूरी दुनिया में, लगभग 165 मिलियन हैक्टेयर क्षेत्र में 730 मिलियन टन चावल का उत्पादन किया जाता है। भारत में धान लगभग 43 मिलियन हैक्टेयर में लगाया जाता है जिससे 96 मिलियन टन चावल और लगभग 250 मिलियन टन भूसे का उत्पादन होता है। किसानों को इतनी बड़ी मात्रा में भूसे को संभालना बहुत मुश्किल लगता है और इसी कारण वे इसे जलाना बेहतर समझते हैं। उत्तरी भारत में भूसे को जलाने की प्रथा सबसे अधिक प्रचलित है। अकेले हरियाणा में, लगभग 13.20 लाख हैक्टेयर क्षेत्र में धान उगाया जाता है। जिनमें से बासमती किस्में 7.67 लाख हैक्टेयर क्षेत्र में उगाई जाती हैं जबकि 5.53 लाख हैक्टेयर में गैर बासमती धान उगाया जाता है जिससे 69.54 लाख मीट्रिक टन तक भूसा होता है। हाल के वर्षों में, इसकी तीव्रता इतनी हो गई है कि यह अक्तूबर के महीने के दौरान अंतर्राष्ट्रीय ध्यान आकर्षित करती है। भूसे को जलाना मानव स्वास्थ्य, मिट्टी के स्वास्थ्य और पर्यावरणीय स्वास्थ्य के लिए बहुत हानिकारक है। किसान धान के भूसे के बचे हुए हिस्से का उपयोग करने के आर्थिक तरीकों से अवगत नहीं है। कुशल तरीके से इस धान के भूसे का उपयोग करने के कुछ वैकल्पिक तरीके हैं। उनमें से धान के भूसे की ब्रिकेटिंग है, जिसे घरेलू क्षेत्र में ईंधन के रूप में इस्तेमाल किया जा सकता है, बॉयलर में भाप उत्पादन के लिए, बढ़ती आबादी की ऊर्जा ज़रूरत को पूरा करने के लिए बिजली उत्पादन के लिए आदि। जीवाश्म ईंधन की कमी को हल करने के लिए, धान के भूसे से उत्पादित ब्रिकेट का उपयोग ऊर्जा उत्पादन के लिए जैव ईंधन के रूप में किया जा सकता है। धान के भूसे की ब्रिकेटिंग हानिकारक गैसों को कम करने में मदद करती है और यह ग्रामीण विकास के साथ ही उपलब्ध अपशिष्ट धान के भूसे का स्थायी उपयोग भी है।

धान के भूसे का जैव-ईंधन ब्रिकेट में रूपांतरण

धान के भूसे की ब्रिकेटिंग

ब्रिकेटिंग प्रक्रिया ढीले धान के भूसे या किसी भी अन्य कृषि अपशिष्ट बायोमास को उच्च घनत्व वाले हरे ईंधन में परिवर्तित करती है। सामग्री की थोक घनत्व 4-10 गुना बढ़ जाती है। अध्ययनों से पता चलता है कि धान के भूसे में 3400 से 3600 किलो कैलोरी/किग्रा की सीमा में ईंधन मूल्य होता है, इसलिए इसे बॉयलर में, फर्नेस में, ईंट की भट्ठी में और घरेलू खाना पकाने में भी ईंधन के रूप में उपयोग की जाने की बड़ी क्षमता है। सोयाबीन स्ट्रॉ, जैसे अन्य फसल अवशेषों के मिश्रण के साथ भी धान के भूसे की ब्रिकेटिंग की जा सकती है।

मूल रूप से दो प्रकार की ब्रिकेटिंग तकनीक है जो पिस्टन प्रेस और स्क्रू प्रेस हैं। प्रेस का उपयोग कच्चे माल के प्रसंस्करण में किया जाता है जिसे बायोमास के रूप में उपयोग किया जा सकता है। स्क्रू ब्रिकेट प्रेस द्वारा कॉम्पैक्ट बायोमास को खोखले ब्रिकेट में परिवर्तित किया जाता है जिसे बाद में सह-फायरिंग में कोयले के लिए इस्तेमाल किया जाता है।

इस प्रक्रिया में एक गर्म टेपर डाई के माध्यम से बायोमास सामग्री की निरंतर निकासी शामिल होती है जो एक डोनट की तरह मध्य में एक

विस्तृत छेद के साथ ब्रिकेट बनाती है, जो उच्च दहन दर के लिए सतह क्षेत्र को बढ़ाने के लिए सही सेवा प्रदान करती है। यह वांछित है क्योंकि यह हल्की और शांत है क्योंकि इसमें सामग्री की कोई छिद्रण की आवश्यकता नहीं है।

स्क्रू ब्रिकेट प्रेस

पिस्टन ब्रिकेट प्रेस को मैकेनिकल स्टैम्पिंग या पंचिंग ब्रिकेट प्रेस के रूप में भी जाना जाता है, जिसका उपयोग उद्देश्यों की विस्तृत श्रृंखला के अनुरूप ठोस ब्रिकेट बनाने के लिए किया जाता है। यह एक पारस्परिक रैम द्वारा सामग्री को छिद्रित करके मोल्ड करता है जिसमें उच्च दबाव होता है। इसलिए ब्रिकेट्स की एक छोटी सतह होती है और कम दहन दर होती है। इसे प्राथमिकता दी जाती है क्योंकि यह स्क्रू प्रेस की तुलना में लागत प्रभावी है जिसके लिए बहुत सारी शक्ति की आवश्यकता होती है।

पिस्टन ब्रिकेट प्रेस

धान की स्ट्रॉ ब्रिकेटिंग प्रक्रिया

1. स्ट्रॉ की क्रशिंग : लंबे और मोटी स्ट्रॉ को पहले छोटे आकार में कुचल दिया जाता है।

2. सुखाना : इसके बाद भूसे को सुखाया जाता है। यह या तो धूप में या ड्रायर के उपयोग से किया जा सकता है जब वे पूरी तरह से गीले होते हैं। भूसे को फिर पाऊडर में तब्दील किया जाता है।

3. ब्रिकेटिंग : कुचले और सूखे पाउडर को ब्रिकेटिंग मशीन पर भेज दिया जाता है जहां अधिक घनत्व ब्रिकेट बनाने के लिए बहुत अच्छा दबाव उत्पन्न होता है।

4. ठंडा करना : फिर उन्हें कमरे के तापमान में ठंडा कर दिया जाता है।

ब्रिकेट से ऊर्जा उत्पादन

भारत जैसे विकासशील देश में, कोयले को भट्ठी में दहन करके अथवा हीट एक्सचेंजर के माध्यम से भाप उत्पादन के द्वारा ऊर्जा उत्पादित की जाती है। जीवाश्म ईंधन (जो सीमित मात्रा में पहले से ही है) का निरंतर उपयोग होता है जिसके परिणामस्वरूप इसकी गंभीर कमी होती है, इसलिए इस पारंपरिक ईंधन के लिए कुछ विकल्प खोजने की तत्काल आवश्यकता है। इसके अलावा दुनिया भर में बढ़ती आबादी के साथ प्रति व्यक्ति बिजली की खपत प्रति दिन बढ़ रही है, और अकेले कोयला या अन्य जीवाश्म ईंधन इसकी मांग को पूरा करने में सक्षम नहीं है। यह केवल कुछ विकल्प जैसे बायो-ईंधन के रूप में ब्रिकेट के रूप में संभव है और धान के भूसे आदि जैसे कृषि अवशेषों से उत्पादित बायोमास ब्रिकेट को कोयले के जैव ईंधन विकल्प के रूप में इस्तेमाल किया जा सकता है। यह न केवल ऊर्जा के अक्षय स्रोत के रूप में कार्य करेगा बल्कि यह पर्यावरण के अनुकूल ईंधन है। इन बायोमास ब्रिकेट्स द्वारा जीवाश्म ईंधन के मुकाबले बिना किसी भी नुकसान के साफ सुथरी बिजली का उत्पादन कर सकते हैं। कोयले जैसे मौजूदा पारंपरिक ईंधन को बदलने के लिए धान के भूसे से बनी ब्रिकेट्स का उपयोग बॉयलर में भाप उत्पादन, हीटिंग उद्देश्य के लिए, सुखाने की प्रक्रिया के लिए और गैसीफिकेशन प्लांट में किया जा सकता है। ब्रिकेट जलाने की ईंधन लागत एक रुपये प्रति हज़ार किलो कैलोरी आती है जोकि कोयला जलाने में 1.3 से 1.4 रुपये प्रति 1000 कि.ग्रा. है।

निष्कर्ष : धान के भूसे से ब्रिकेटिंग अपशिष्ट अवशेषों के प्रबंधन के लिए एक स्थायी विकल्प के रूप में उभर रही है, अन्यथा इसे या तो जला दिया जाता है या खेत में अपघटन के लिए रखा जाता है। धान के भूसे से ब्रिकेटिंग के लाभों में वह सरल प्रक्रिया शामिल है जिसके द्वारा इसे बनाया जा सकता है। इससे हानिकारक गैसों में कमी और ग्रामीण विकास के साथ उपलब्ध अपशिष्ट धान के भूसे का स्थायी उपयोग होता है। इस प्रकार यह पर्यावरण अनुकूल, ऊर्जा कुशल और लागत प्रभावी तकनीक है। अध्ययन से पता चला कि ब्रिकेटिंग प्लांट (500 किलो/घंटा) की एक इकाई ग्रामीण युवाओं को सालाना 3000 से 4000 मैन डेज़ का रोज़गार पैदा करेगी। यह ग्रामीण बेरोज़गार युवाओं के लिए आय उत्पादन का स्रोत हो सकता है और इस प्रकार बेरोज़गारी और रोज़गार के तहत समस्याओं को ब्रिकेटिंग नामक तकनीक को अपनाने के द्वारा हल किया जा सकता है। इसके साथ ही अपशिष्ट बायोमैटेरियल के इस मूल्यवर्धन के अलावा, लोग धान के भूसे की खुले मैदान में जलाने के दौरान पर्यावरण में हानिकारक गैसों की रिहाई को हटाकर कार्बन क्रेडिट कमा सकते हैं। यह आवश्यक है कि ग्रामीण क्षेत्र में काम कर रहे एनजीओ को इस कचरे को ब्रिकेट उत्पादन और उसके उपयोग के व्यावसायीकरण के माध्यम से धन में परिवर्तित करने के लिए आगे आना चाहिए, जो ग्रामीण आजीविका के विकास के लिए एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाएगा। बढ़ती आबादी की ऊर्जा मांग को पूरा करने के लिए, ऊर्जा उत्पादन के लिए कोयले या अन्य जीवाश्म ईंधन के विकल्प के रूप में ब्रिकेट का उपयोग किया जा सकता है। यह भविष्य में जीवाश्म ईंधन की कमी की समस्या को भी दूर करेगा क्योंकि बायो-ब्रिकेट स्वयं ऊर्जा का नवीकरणीय स्रोत है। धान के भूसे से ब्रिकेट का उत्पादन न केवल ग्रामीण इलाके में जैव ईंधन उपलब्ध कराता है बल्कि किसान की आमदनी को दोगुना करने के हमारे प्रधान मंत्री के सपने को पूरा करने में किसान की आय बढ़ाने में भी मदद करता है। इस प्रकार यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि इस तकनीक को अपनाने से (यानी धान की भूसे की ब्रिकेटिंग) कृषि समुदाय के सामाजिक-आर्थिक उत्थान और वायुमंडल में हानिकारक गैसों में कमी में भी मदद मिलेगी।

आवश्यक सूचना

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार स्थित किसान सेवा केन्द्र में किसानों हेतु सप्ताह में तीन दिन सोमवार, बुधवार एवं शुक्रवार को 10 से 12 बजे तक निःशुल्क फोन सुविधा (हैल्प लाइन) फोन नं. 1800-180-3001 पर उपलब्ध है जिसमें वैज्ञानिकों से कृषि-संबंधी परामर्श किया जा सकता है। यदि किसी जगह से यह फोन सुविधा उपलब्ध नहीं हो तो किसान भाई 01662-232768 पर सशुल्क फोन करके उपर्युक्त दिनों में इस सुविधा का लाभ उठा सकते हैं।

क्षेत्रीय अनुसंधान केन्द्र, बावल में भी सोमवार, बुधवार, शुक्रवार 10 से 12 बजे तक फोन नं. 1800-180-4002 पर यह निःशुल्क फोन सुविधा उपलब्ध है।

क्षेत्रीय अनुसंधान केन्द्र, ऊचानी (करनाल) में भी मंगलवार व बृहस्पतिवार 10 से 11 बजे तक फोन नं. 1800-180-3111 पर यह निःशुल्क फोन सुविधा उपलब्ध है।

अगस्त मास के कृषि कार्य

फसलों में

बाजरा

बिजाई के लगभग 3 सप्ताह बाद किसी वर्षा वाले दिन कतारों में से फालतू पौधे निकाल कर खाली स्थानों में लगाएं ताकि पौधे से पौधे का फासला लगभग 12 सैं.मी. रहे। इसी समय निराई-गुड़ाई करें ताकि खेत में खरपतवार न रहें। यदि किसी कारणवश बाजरे की बिजाई न हो पाई हो तो इसकी पौध रोपाई तीन हफ्ते पुरानी पौध से मध्य-अगस्त तक किसी वर्षा वाले दिन, 45 सैं.मी. के अंतर पर कतारों में करें व पौधे से पौधे का फासला 12 सैं.मी. रखें। संकर बाजरे की सिंचित फसल में नाइट्रोजन की दूसरी मात्रा, लगभग 45 कि.ग्रा. यूरिया प्रति एकड़ बिजाई के 3 हफ्ते बाद फसल की छंटाई के समय तथा 45 किलोग्राम यूरिया, जब गोभ में सिट्टा आ जाए, डालें। यदि खाद डालते समय खेत में पर्याप्त नमी न हो और वर्षा भी न हो रही हो तो फसल में पानी लगा दें। बाजरे की बारानी फसल में अगर किसी कारणवश यूरिया खाद बिजाई के समय न डाल सके हों तो लगभग 35 किलोग्राम यूरिया प्रति एकड़ खड़ी फसल में तभी डालें जब वर्षा हो जाए या होने की संभावना हो। यदि बाजरे की फसल में जस्ते की कमी के लक्षण दिखाई दें तो 0.5 प्रतिशत ज़िंक सल्फेट का छिड़काव करें। एक एकड़ के लिए एक किलोग्राम ज़िंक सल्फेट (21%), 6 किलोग्राम यूरिया व 200 लीटर पानी का प्रयोग करें। 10-12 दिन के अंतर पर कम से कम 2-3 छिड़काव करें।

कोढ़िया या डाऊनी मिल्ड्यू रोग से प्रभावित पौधों को उखाड़ कर नष्ट कर दें। ऐसे पौधे रंग में पीले, कद में बौने होते हैं तथा पत्तियों की निचली या दोनों सतहों पर सफेद रंग का पाऊडर-सा छाया रहता है। ध्यान रहे कि रोगी पौधों को उखाडने का काम बिजाई के तीन या चार सप्ताह के अंदर पूरा कर लें। जब पत्तों से बालें बाहर आने लगें तो बालों पर चेपा रोग की रोकथाम के लिए क्यूमान एल. (400 मि.ली. प्रति एकड़) का 200 लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करें। चेपाग्रस्त बालों के दिखाई देते ही उन्हें खेत से निकालकर नष्ट कर दें। खरपतवार की रोकथाम के तुरंत बाद यदि रसायन का छिड़काव न किया हो तो बिजाई के 7 से 15 दिन के अंदर 400 ग्राम (50 प्रतिशत घु.पा.) एट्राजिन 250 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़काव करें।

यदि बालों वाली सूण्डी का आक्रमण हो तो पत्तों पर अंडों के जो समूह होते हैं उन पत्तों को अंडों सहित तोड़कर नष्ट कर दें। बड़ी सूण्डियों को मारने के लिए 500 मि.ली. क्विनलफॉस 25 ई.सी. या 200 मि.ली. डाइक्लोरवास 76 ई.सी. 250 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ फसल पर छिड़कें। प्रौढ़ों को प्रकाश प्रपंच से नष्ट करें।

मक्का

अगर वर्षा न हो तो ज़रूरत के अनुसार फसल को पानी दें। जल निकास का पूरा प्रबंध करें। खेत में खरपतवार बिल्कुल न उगने दें। महीने के पहले पखवाड़े में पौधे घुटनों तक उग आने पर संकर व कम्पोज़िट मक्की में 45 किलोग्राम यूरिया प्रति एकड़ के हिसाब से कतारों में, पौधों में थोड़ी दूर से डालें व फसल की निराई करें। कतारों में खड़े फालतू पौधों को इस हिसाब से निकालें कि संकर किस्मों में एक पौधे से दूसरे पौधे का फासला 22.0 सैं.मी. रहे। दूसरे पखवाड़े में संकर मक्का में झण्डे आने से पहले कतारों के बीच 45 किलोग्राम यूरिया की अंतिम मात्रा प्रति एकड़ के हिसाब से डालें और उसे मिट्टी में अच्छी तरह मिला दें। यदि पत्तों पर जस्ते की कमी के लक्षण दिखाई दें तो 0.5 प्रतिशत ज़िंक सल्फेट का यूरिया के साथ छिड़काव कर दें। कम से कम 2-3 छिड़काव 10-12 दिन के अंतराल पर करें। इसके लिए 200 लीटर पानी में 1 कि.ग्रा. ज़िंक सल्फेट (21%) व 6 कि.ग्रा. यूरिया का प्रयोग करें।

पत्तों की अंगमारी व पत्तों के अन्य रोगों से बचाव के लिए 600 ग्राम जिनेब या मैन्कोज़ेब के घोल का 10-15 दिन की अवधि पर प्रति एकड़ छिड़काव करें।

कपास

देसी कपास में पौधे से निकल रही फूटों को इस माह के पहले पखवाड़े में काट दें। इस माह के मध्य तक कपास में नाइट्रोजन खाद की दूसरी मात्रा अवश्य डाल दें। देसी कपास में इस समय 25 किलोग्राम यूरिया प्रति एकड़ डालें। अमेरिकन कपास में फूल आने के समय 40 किलोग्राम यूरिया प्रति एकड़ के हिसाब से डालें। संकर किस्मों के लिए नत्रजन खाद (150 कि.ग्रा. यूरिया) को तीन बराबर हिस्सों में बांट कर तीन बार-बिजाई के समय, बौकी आने पर तथा फूल आने पर डाली जाती है। अत: आगे फूल आने पर 50 किलोग्राम यूरिया की तीसरी मात्रा अवश्य डालें। यदि ज़मीन में पर्याप्त नमी न हो तो हल्का पानी लगा दें। इससे पैदावार में बढ़ोत्तरी होती है। अमेरिकन कपास में फलों को सड़ने तथा टिण्डों को गिरने से रोकने के लिए फसल में एन.ए.ए. (जैसे प्लेनोफिक्स या और कोई इस जैसी दवा) का दो बार छिड़काव करें। पहला छिड़काव 50 ई.सी. दवा 280 लीटर पानी में मिलाकर फल आने के समय प्रति एकड़ करें व दूसरा छिड़काव 70 सी.सी. के हिसाब से पहले छिड़काव के 20 दिन बाद करें। छिड़काव में खारे पानी का प्रयोग न करें।

लेखक :

एच. एस. सहारण, सह-निदेशक (कृषि परामर्श सेवा)
अनिल कुमार गोदारा, विभागाध्यक्ष (बागवानी)
डी. एस. दुहन, सहायक वैज्ञानिक (सब्जी विज्ञान)
तरुण वर्मा, जिला विस्तार विशेषज्ञ (कीट विज्ञान)
रोहतास कुमार, सहायक वैज्ञानिक (मृदा विज्ञान)
वी. एस. हुड्डा, सहायक वैज्ञानिक (सस्य विज्ञान)
देवेन्द्र सिंह बिढान, सहायक प्राध्यापक (पशु उत्पादन प्रबन्धन)
लीलावती, प्राध्यापिका (सूक्ष्मजीव विज्ञान)
राजेश दहिया, सहायक प्राध्यापिका (गृह विज्ञान)
सूबे सिंह, सहायक निदेशक (विस्तार शिक्षा)

विस्तार शिक्षा निदेशालय, गांधी भवन
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

फसल को कोणदार धब्बों की बीमारी से बचाव हेतु प्लांटोमाइसिन (30-40 ग्राम प्रति एकड़) या स्ट्रैप्टोसाइक्लिन (6-8 ग्राम प्रति एकड़) व कॉपर ऑक्सीक्लोराईड (600-800 ग्राम प्रति एकड़) के घोल का 15 दिन के अंतराल पर छिड़काव करें। 2,4-डी कपास के लिए घातक है। किसी भी रूप में इसे कपास की फसल के संपर्क में न आने दें। जिन छिड़काव यंत्रों से पहले 2,4-डी का छिड़काव किया गया हो उन्हें कपास में कीट या फफूंदनाशकों के छिड़काव के लिए प्रयोग में न लाएं।

2, 4-डी से प्रभावित पौधों की समस्या हो जाने पर प्रभावित कोंपलों को 15 सैं.मी. काट दें और इसके बाद 2.5 प्रतिशत यूरिया तथा 0.5 प्रतिशत ज़िंक सल्फेट के घोल का छिड़काव करें।

अगस्त-सितम्बर में कपास की फसल को कीड़ों से बचाने के लिए 12 से 15 दिन के अंतर पर चार छिड़काव करने पड़ेंगे। अभी से कीटनाशकों का प्रबंध करें। इसके लिए जो भी दवाई आपने खरीदी है उसका थोड़ा घोल बनाकर पहले 15-20 पौधों पर छिड़क लें। यदि पौधों में चार-पांच दिन तक कोई खराब असर विशेषकर बन्दरपंजा न हो तो आगे छिड़काव करें, नहीं तो वह दवाई प्रयोग न करें।

अगस्त के पहले पखवाड़े में अधिक नमी वाला मौसम होने के कारण हरे तेले का प्रकोप अधिक होता है। आवश्यकता पडने पर (2 शिशु तेला/पत्ता) हरा तेला की रोकथाम के लिए 250-350 मि.ली. डाईमैथोएट 30 ई.सी. या 40 मि.ली. ईमीडाक्लोपरिड 200 एस एल या 40 ग्राम थायोमीथोक्सेम 25 घु. पा. को 150 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़कें। ये कीटनाशक सूण्डियों की रोकथाम के लिए प्रयोग हो रही कीटनाशकों में मिलाई जा सकती हैं। चित्तीदार सूण्डी, गुलाबी सूण्डी तथा अमेरीकन सूण्डी की रोकथाम के लिए सप्ताह में दो बार खेत में 10 पौधों का निरीक्षण करें तथा उन पर 5 सूण्डियां मिलने या 5 प्रतिशत फल प्रभावित होने की अवस्था में 600 मि.ली. क्विनलफॉस 25 ई.सी. या 500-600 मि.ली. ट्राइएजोफास 40 ई.सी. में से किसी एक को 150-200 लीटर पानी में मिलाकर बारीक फव्वारे द्वारा प्रति एकड़ छिड़काव करें। दूसरा छिड़काव किसी एक सिन्थेटिक पायरेथरायड (100-125 मि.ली. फैनवालरेट 20 ई.सी. या 100-125 मि.ली. अलफामैथरीन 10 ई.सी. या 80-100 मि.ली. साईपरमैथरीन 25 ई.सी. या 160-200 मि.ली. डेकामैथरीन 2.8 ई.सी.) को 150-200 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़काव करें। अमेरीकन सूण्डी की रोकथाम के लिए सिन्थेटिक पायरेथरायड का प्रयोग न करें अपितु 300 ग्राम थायोडिकार्ब (लार्विन) 75 डब्ल्यू.पी. या 75 मि.ली. स्पाइनोसेड (ट्रेसर) 45 एस.सी. का प्रयोग करें।

अगर बी.टी. कपास बोई है तो अगस्त मास में सूण्डियों के नियंत्रण के लिए कीटनाशकों का छिड़काव करने की आवश्यकता नहीं है, परंतु इस पर रस चूसने वाले कीड़ों का प्रकोप प्राय: अधिक होता है। अत: इनके नियंत्रण के लिए 2-3 छिड़काव करने पड़ सकते हैं।

किसी एक कीटनाशक का एक से अधिक बार प्रयोग/छिड़काव न करें। मीलीबग के प्रकोप की अवस्था में पिछले अंक में सुझाए गए उपाय अपनाएं।

धान

फसल में पानी की कमी न होने दें। सिंचाई 5-6 सैं.मी. से अधिक गहरी न करें। खेत में खरपतवारों को कभी न पनपने दें। धान की बौनी बासमती किस्मों में प्रति एकड़ 80 किलोग्राम यूरिया को तीन बार में डालें-रोपाई पर, 3 सप्ताह बाद व 6 सप्ताह बाद। लंबी किस्म वाली बासमती धान में 24 किलोग्राम नाइट्रोजन (50 किलोग्राम यूरिया) प्रति एकड़ के हिसाब से रोपाई के 3 व 6 सप्ताह बाद आधी-आधी डालें। खाद डालते समय खेत की मिट्टी गीली हो पर उसमें पानी न खड़ा हो। खाद डालने के 12-24 घण्टे बाद खेत में पानी दें।

पत्तियों पर बदरा (ब्लास्ट) बीमारी के लक्षण नज़र आते ही प्रति एकड़ 120 ग्राम ट्राइसाइक्लाज़ोल (बीम या सिविक) 75 डब्ल्यू पी या 200 ग्राम कार्बेन्डाज़िम के घोल का छिड़काव करें। पानी की मात्रा 200 लीटर रखें। दूसरा छिड़काव 50 प्रतिशत बालियां निकलने पर करें। बालियां निकलते समय खेत में सूखा न लगने दें। बैक्टीरियल लीफ ब्लाईट या जीवाणुज पत्ती अंगमारी जिन खेतों में आ जाए उनमें पानी लगातार न खड़ा रहने दें और न ही उस खेत का पानी दूसरे खेतों में जाने दें। ऐसे खेतों में नाइट्रोजन खाद बाद में न डालें।

यदि धान में जड़ की सूण्डी (रूट वीवल) का आक्रमण हो तो 10 किलोग्राम फ्यूराडान 3-जी या 4 कि.ग्रा. फोरेट 10-जी प्रति एकड़ डालें। सफेद पीठ वाला व भूरा तेला (ब्राउन प्लांट हॉपर) पौधे के तने के साथ लगा रहता है और इससे फसल छोटे-छोटे क्षेत्रों में पीली होकर सूखने लगती है। इसकी रोकथाम के लिए मिथाइल पैराथियान 2 प्रतिशत का धूड़ा प्रति एकड़ धूड़ें या 250 मि.ली. मोनोक्रोटोफॉस 36 एस.एल. या 330 मि.ली. बुप्रोफेजिन (ट्रिब्यून) 25 एस.सी. को 200 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़कें।

अरहर, मूँग, उड़द, लोबिया व सोयाबीन

खरपतवारों की समय पर रोकथाम करने के लिए निराई करें। खेत में पानी न ठहरने दें। प्राय: पत्तों पर लाल व भूरे रंग के कोणदार धब्बे (जिनके बीच का रंग सलेटी होता है) बन जाते हैं। इस बीमारी की रोकथाम के लिए लक्षण दिखते ही 600 ग्राम ब्लाइटॉक्स या ब्ल्यू कॉपर का 200 लीटर पानी में घोल बनाकर एक एकड़ फसल पर छिड़काव करें और 10 दिन के अंतर पर आवश्यकतानुसार छिड़काव दोहराएं।

मूंग, उड़द व लोबिया में विषाणु रोगों के प्रकोप से पौधों की बढ़वार रुक जाती है तथा पत्तियां पीली, चितकबरी या झुर्रीदार हो जाती हैं। इनकी रोकथाम के लिए शुरू में ही रोगी पौधों को निकालकर नष्ट कर दें। ध्यान रहे कि उखाड़ते समय रोगी पौधों का संपर्क स्वस्थ पौधों से न होने पाए। सफेद मक्खी, जोकि विषाणु रोग फैलाती है, की रोकथाम के लिए 400 मिलीलीटर मैलाथियान 50 ई.सी. या 250 मि.ली. रोगोर 30 ई.सी. को 250 लीटर पानी में घोलकर प्रति एकड़ फसल पर 10-15 दिन के अंतर पर छिड़कें।

उपर्युक्त कीटनाशक दूसरे रस चूसने वाले कीड़ों के लिए भी हैं।

गन्ना

ईख की बंधाई शुरू कर दें। यदि अभी तक मिट्टी चढ़ाने का काम पूरा नहीं किया तो अब कर लें। इन दिनों गुरदासपुर छेदक (बोरर) की रोकथाम के लिए हर सप्ताह प्रभावित गन्नों को एकत्रित करके नष्ट करते रहें। ईख के जिन खेतों में पाइरिल्ला अधिक बढ़ रहा हो वहां इसके परजीवी गन्ना अनुसंधान केन्द्र, करनाल से लाकर छोडने चाहिएं।

पाइरिल्ला (अल) का प्रकोप होने पर 400-600 मि.ली. मैलाथियान 50 ई.सी. को 400-600 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़कें। यदि परजीवियों की संख्या काफी हो तो कीटनाशक न छिड़कें। वैसे अपनी फसल में पाइरिल्ला बढ़ते ही परजीवी खेत में छोडने का प्रबंध करें। जड़ बेधक का आक्रमण हो तो अगस्त के अंत में 8 कि.ग्रा. क्विनलफॉस 5-जी प्रति एकड़ फसल में डालें व फिर हल्की सिंचाई कर दें।

मूंगफली

घास-फूस को नष्ट करने के लिए निराई करें तथा आवश्यकतानुसार पानी लगाएं।

यदि बालों वाली सूण्डियों का आक्रमण हो तो बाजरे की फसल में बताए गए उपाय से नियंत्रण करें।

टिक्का नामक बीमारी के आक्रमण से पत्तियों पर गहरे भूरे रंग के धब्बे बन जाते हैं। इनके नियंत्रण के लिए लक्षण दिखते ही 400-500 ग्राम मैन्कोज़ेब या 200-250 ग्राम बाविस्टीन को 200-250 लीटर पानी में घोल बनाकर एक एकड़ की फसल पर 10-15 दिन के अंतर पर दो बार छिड़कें।

तिल

फायलोडी रोग को (बालियों की जगह हरी पत्तियों के गुच्छों का बनना) रोकने के लिए अभी से ही कीड़ों को नष्ट करें क्योंकि हरे तेले ही इस रोग के रोगाणु फैलाते हैं। तेले के नियंत्रण के लिए 200 मि.ली. मैलाथियान 50 ई.सी. को 200 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़कें।

तोरिया

इस माह के अंत में या अगले माह के शुरू में तोरिया की बिजाई के लिए खेत की तैयारी पूरी कर लें। तोरिया की उन्नत किस्म ''संगम'' टी एल 15 या टी एच 68 के बीज का प्रबंध कर लें। एक एकड़ के लिए 2 किलोग्राम बीज की आवश्यकता पड़ेगी। सिंचित तोरिया में 26 किलोग्राम यूरिया व 50 किलोग्राम सिंगल सुपर फास्फेट बिजाई के समय प्रति एकड़ प्रयोग करें, बाकी यूरिया (50 कि.ग्रा.) पहले पानी के साथ अवश्य डालें। असिंचित तोरिया में 35 किलोग्राम यूरिया तथा 50 किलोग्राम सिंगल सुपर फास्फेट बिजाई के समय पोरें। यदि ज़मीन में जस्ते की कमी हो तो बिजाई के समय 10 किलोग्राम ज़िंक सल्फेट भी डालें। यदि बिजाई के समय ज़िंक सल्फेट नहीं डाला है और खड़ी फसल में कमी आ जाए तो 0.5 प्रतिशत ज़िंक सल्फेट का छिड़काव करें। फसल में गंधक की कमी न आए, इसके लिए फास्फोरस का स्रोत सिंगल सुपर फास्फेट ही प्रयोग करें। यदि फास्फोरस डी.ए.पी. से दें तो 100 किलोग्राम जिप्सम भी डालें जिससे फसल में गंधक की पूर्ति हो जाए। जिस ज़मीन में पर्याप्त गंधक हो वहां गंधक डालने से कोई लाभ नहीं होगा।

चारे की फसलें

सूडान घास व संकर हाथी घास की हरे चारे के लिए कटाई करें। वर्षा न हो तो पानी लगाएं। प्रत्येक कटाई के बाद 22 किलोग्राम व 26 किलोग्राम यूरिया प्रति एकड़ के हिसाब से क्रमशः सूडान घास व संकर हाथी घास में दें। ज्वार व बाजरा की चारे वाली फसलों में बिजाई के 30-35 दिन बाद 22 किलोग्राम तथा मकचरी में 44 किलोग्राम यूरिया प्रति एकड़ दें। वर्षा न हो तो पानी लगाएं।

सब्जियों में

विशेष : सब्जियों की सभी फसलों में अधिक वर्षा होने पर जल निकास का प्रबंध करें।

बैंगन

पिछली फसल के कच्चे फलों को तोड़कर बाज़ार बेचने के लिए भेज दें। तोड़ने के लिए तेज़ चाकू या अन्य तेज़ धार वाले औज़ार का प्रयोग करें। आवश्यकता होने पर सिंचाई करें। खरीफ की नई लगाई गई फसल में निराई-गुड़ाई करें। पौधरोपण के लगभग तीन-चार सप्ताह बाद प्रति एकड़ लगभग 35 किलोग्राम यूरिया खड़ी फसल में दें तथा सिंचाई करें। अधिक वर्षा होने पर जल-निकास का प्रबंध करें। विषाणु रोग से बचाव के लिए कीटनाशक दवा का प्रयोग करें तथा रोगी पौधों को निकाल कर नष्ट कर दें। रस चूसने वाले कीटों के नियंत्रण के लिए 15 दिन के अंतर पर 300-400 मि.ली. मैलाथियान 50 ई.सी. को 200 से 250 लीटर पानी में प्रति एकड़ छिड़कें। फल लगने पर सूण्डी का आक्रमण होने लगता है, अतः 75 ग्राम स्पाइनोसेड (ट्रेसर 45 एस.सी.) 200 लीटर पानी में 15 दिन के अंतर पर प्रति एकड़ छिड़कें। दवा प्रयोग करने से पहले फसल से बैंगनों को तोड़ लें तथा दवा छिड़कने के 8-10 दिन तक इन्हें सब्जी के काम में न लें। कीड़े से मुरझाई कोंपलों और काने फलों को हर सप्ताह तोड़कर ज़मीन में दबाते रहें।

मिर्च

पिछले माह रोपी गई फसल में निराई-गुड़ाई करें। आवश्यकता होने पर सिंचाई करें। अधिक वर्षा होने पर पानी के निकास का प्रबंध करें। पौधरोपण के लगभग तीन-चार सप्ताह बाद प्रति एकड़ 18 किलोग्राम यूरिया (8 किलोग्राम नाइट्रोजन) खड़ी फसल में देकर सिंचाई करें। विषाणु रोग से बचाव के लिए शुरू से ही 400 मि.ली. मैलाथियान 50 ई.सी. 250 लीटर पानी में घोलकर प्रति एकड़ खेत पर छिड़कें तथा रोगी पौधों को खेत से निकाल कर नष्ट कर दें। इसी कीटनाशक के प्रयोग से मिर्च के अन्य हानिकारक कीटों (थ्रिप्स, अल और सफेद मक्खी) का भी नियंत्रण हो जाता है।

फूलगोभी अगेती

अगेती किस्मों (पूसा कातकी व पूसा दीपाली) की तैयार पौध की खेत में रोपाई करें। खेत की तैयारी पिछले माह बताए गए तरीके से करें। पौधरोपण शाम के समय करें तथा उसके बाद सिंचाई करें। खेत में से नियमित रूप से खरपतवार निकालें तथा यदि सूखा भाग हो तो सिंचाई करें। अधिक वर्षा होने पर खेत से जल-निकास का प्रबंध करें। मध्यम वर्ग की फूलगोभी की बिजाई इस माह नर्सरी में करें। एक एकड़ के लिए 250 से 300 ग्राम बीज की आवश्यकता होगी। नर्सरी में पौध की उचित देखभाल करें।

भिण्डी

गर्मी की फसल से भिण्डी की नर्म फलियां नियमित रूप से तोड़कर बाज़ार भेजें। यदि आवश्यकता पड़े तो सिंचाई करें। अधिक वर्षा होने पर खेत से जल-निकास का प्रबंध करें। रस चूसने वाले कीड़ों के नियंत्रण के लिए 300-500 मि.ली. मैलाथियान 50 ई.सी. को 200-300 लीटर पानी में 15 दिन के अंतर से प्रति एकड़ छिड़कें। फल लगने शुरू होते ही 400-500 मि.ली. मैलाथियान 50 ई.सी. या 75-80 मि.ली. स्पाईनोसेड 45 एस सी को बारी-बारी से 250-300 लीटर पानी में 15 दिन के अंतर से प्रति एकड़ फसल पर छिड़कें। ऐसा करने से फल की सूण्डी का भी नियंत्रण हो जाएगा। कीटनाशक छिड़कने से पहले फलों को तोड़ लें तथा छिड़काव के बाद एक सप्ताह तक फलों को खाने के काम में न लें।

जुलाई में बोई फसल से खरपतवार शुरू से ही निकालते रहें। आवश्यकतानुसार सिंचाई करें या जल निकास करें। बिजाई से पहले तथा बिजाई के लगभग तीन-चार सप्ताह बाद लगभग 30 कि.ग्रा. यूरिया (14 किलोग्राम नाइट्रोजन) देकर सिंचाई करें। पीली शिराओं वाले विषाणु रोग से बचाव के लिए कीटनाशक दवा प्रयोग करें तथा 6-7 दिन तक भिण्डी न तोड़ें। रोगी पौधों को उखाड़कर नष्ट कर दें।

कद्दू जाति की सब्जियां

गर्मी की फसल के कच्चे फलों को तोड़कर बाज़ार भेजें। इस वर्ग की प्रमुख सब्जियां, घीया, टिण्डा, करेला, तोरी, कद्दू व खीरा हैं। हानिकारक कीड़ों से बचाव के लिए जून माह में बताई गई दवा का प्रयोग करें। वर्षा ऋतु में बीजी गई फसलों से खरपतवार निकालें, आवश्यकता होने पर सिंचाई करें। अधिक वर्षा होने पर पानी के निकास का प्रबंध करें। बिजाई के लगभग एक माह बाद 14 किलोग्राम यूरिया (6 किलोग्राम नाइट्रोजन) प्रति एकड़ की दर से खेत में देकर सिंचाई करें।

लालड़ी (लाल भूंडी) का प्रकोप होने पर 25 मि.ली. साइपरमेथ्रिन 25 ई.सी. को 100 लीटर पानी में घोलकर प्रति एकड़ छिड़कें। विषाणु रोग के प्रभाव से पत्तों पर हरे पीले रंग का चितकबरापन या गहरे-हरे रंग के फफोले बन जाते हैं तथा पत्तियां कड़ी हो जाती हैं। इनसे बचाव के लिए रोगी पौधों को उखाड़ कर नष्ट कर दें। इस रोग को फैलाने वाली मक्खी और दूसरे रस चूसने वाले कीड़ों के लिए 250 मि.ली. मैलाथियान 50 ई. सी. को 250 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़कें। फल की मक्खी की रोकथाम के लिए 400 मि.ली. मैलाथियान 50 ई.सी. को 1.25 किलोग्राम गुड़ और 250 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ फसल पर छिड़कें।

शकरकन्दी

शकरकन्दी की फसल से नियमित रूप से खरपतवारों को निकालें व आवश्यकता होने पर सिंचाई करें। अधिक वर्षा होने पर जल-निकास का प्रबंध करें। फसल लगाने के लगभग 4 सप्ताह बाद 18 किलोग्राम यूरिया (8 कि.ग्रा. नाइट्रोजन) प्रति एकड़ की दर से डालकर सिंचाई करें।

अरबी

अरबी की फसल की निराई-गुड़ाई करें, आवश्यकता होने पर सिंचाई करें, अधिक वर्षा में जल-निकासी का प्रबंध करें। बिजाई के लगभग चार-पांच सप्ताह बाद 18 किलोग्राम यूरिया (8 कि.ग्रा. नाइट्रोजन) प्रति एकड़ की दर से खेत में देकर सिंचाई करें।

पालक

पहले लगाई फसल की आवश्यकता होने पर सिंचाई करें तथा खरपतवार निकालें। कटाई लायक हाने पर पत्तों को काटें तथा बंडलों में बांधकर बाज़ार भेजें। नई बीजी गई फसल की भी देखभाल करें। बिजाई के लगभग 4 सप्ताह बाद 30 किलोग्राम यूरिया (14 किलोग्राम नाइट्रोजन) प्रति एकड़ खेत में देकर सिंचाई करें। पालक की बिजाई इस माह भी की जा सकती है।

मूली, शलगम व गाजर

मूली की पहली बीजी गई फसल की देख-रेख करें, जड़ों को उखाड़कर तथा धोकर बाज़ार भेजें। इस माह मूली, शलगम व गाजर की देसी (अगेती) किस्मों की बिजाई की जा सकती है। मूली की किस्मों में पूसा चेतकी, शलगम की किस्म 4 ह्वाईट तथा गाजर की किस्म पूसा केसर बीजें। गाजर का 4-5 किलोग्राम तथा मूली या शलगम का 2-3 किलोग्राम बीज प्रति एकड़ काफी होता है। समय से खेत की तैयारी करें। एक एकड़ में लगभग 20 टन गोबर की सड़ी खाद, 26 कि.ग्रा. यूरिया (12 कि.ग्रा. नाइट्रोजन) 80 कि.ग्रा. सिंगल सुपर फास्फेट (12 कि.ग्रा. फास्फोरस) प्रति एकड़ देकर खेत तैयार करें। गाजर की फसल के लिए ऊपर दी गई खाद के अलावा लगभग 20 कि.ग्रा. म्यूरेट ऑफ पोटाश (12 कि.ग्रा. पोटाश) भी खेत तैयार करते समय प्रति एकड़ की दर से दें। बिजाई का फासला कतारों में 30-45 सैं.मी. व पौधों में लगभग 8 सैं.मी. रखें। उचित होगा कि छोटी डोलियां बनाकर बिजाई करें।

खरीफ प्याज़

खेत तैयार करें। 10-12 टन गोबर की खाद प्रति एकड़ अच्छी तरह मिला लें। 25 कि.ग्रा. नाइट्रोजन (55 कि.ग्रा. यूरिया) तथा 15 कि.ग्रा. फास्फोरस (95 कि.ग्रा. सिंगल सुपरफास्फेट) प्रति एकड़ की दर से देकर खेत को क्यारियों में बांट लें। नर्सरी में तैयार पौधों की कतारों में 15 सैं.मी. की दूरी पर रोपाई करें। पौध से पौध की दूरी 10 सैं.मी. रखें। उचित होगा कि हल्की डोलियों पर पौधरोपण करें। पौधरोपण का उचित समय अगस्त का दूसरा पखवाड़ा या सितम्बर का प्रथम सप्ताह है।

अन्य सब्जियां

अगेती बंदगोभी के लिए इस माह के दूसरे पखवाड़े में नर्सरी में बिजाई शुरू की जा सकती है। अगेती किस्में 'प्राइड ऑफ इण्डिया' व (गोल्डन एकड़) प्रयोग में लें। एक एकड़ खेत के लिए लगभग 250-300 ग्राम बीज काफी होता है व बिजाई से पहले बीज को कैप्टान से उपचारित करें।

टमाटर तथा बैंगन में जड़ गाँठ सूत्रकृमि की रोकथाम

जुलाई में बोई गई दोनों सब्जियों की नर्सरी अब तक रोपाई के लिए तैयार हो जाती है। सारे खेत में दवाई डालने से आने वाली अधिक कीमत व दवाई के न मिलने पर अरंड अथवा आक के बारीक काटे हुए पत्तों को 8 कि.ग्रा./वर्गमीटर की दर से रोपाई के 15-20 दिन पहले खेत में मिलाना इस सूत्रकृमि के लिए अत्यधिक प्रभावशाली पाया गया है। इन पौधों के पत्ते आसानी से खेतों के आसपास ही मिल जाते हैं और प्रभावित जगहों में डालने के लिए प्रयोग किए जा सकते हैं।

खुम्ब उत्पादन : इस महीने में खुम्ब की ढींगरी तथा सफेद दूधिया खुम्ब का उत्पादन किया जा सकता है।

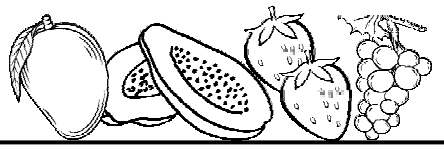

फलों में

अंगूर

अंगूर की बेलों पर शाखाओं को ज़्यादा न बढने दें व लगभग एक मीटर तक रखकर सिरा चूंड दें। यदि ज़मीन में नमी नहीं है तो हल्की सिंचाई करें।

एंथ्रैक्नोज़ तथा अन्य बीमारियों से बचाव के लिए जुलाई के अंतिम सप्ताह, अगस्त के दूसरे व अंतिम सप्ताह में 0.2 प्रतिशत बाविस्टिन का छिड़काव करें।

अंगूर में प्राय: पत्ते खाने वाली भूण्डियां तथा बालों वाली सूण्डियां आती हैं। इनकी रोकथाम के लिए 400 मि.ली. डाइक्लोरवास 76 ई.सी. को 500 लीटर पानी में घोलकर प्रति एकड़ छिड़कें। इन कीड़ों का आक्रमण बेर, आड़ू, अलूचा आदि फलों पर होता है। उन पर भी इन्हीं दवाइयों का प्रयोग करें। थ्रिप्स (चूरड़ा) के नियंत्रण के लिए 500 मि.ली. मैलाथियान 50 ई.सी. या 150 मि.ली. फेनवेलरेट 20 ई.सी. को 500 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़कें।

बेर, आंवला, अमरूद व जामुन

देसी पौधों में अच्छी किस्म का पेबंद चढ़ाने का इस महीने सबसे अच्छा समय है। अत: विश्वसनीय स्थान से उन्हीं किस्मों की कली की

शाखा प्राप्त करके पेबंद चढ़ाने का प्रबंध करें।

किस्में

बेर : गोला, कैथली, उमरान।

आंवला : चकईया, नीलम (एन ए 7), बलवंत (एन ए 10)।

अमरूद : हिसार सफेदा, हिसार सुरखा।

अमरूद

यदि पिछले महीने खाद न डाली हो तो इस महीने खाद व उर्वरक पौधों की उम्र के हिसाब से डालें।

अन्य फल

फलदार पौधे लगाने के लिए बरसात का मौसम सबसे अच्छा रहता है। अच्छी वर्षा होने पर आप पिछले महीने बताए गए पौधे लगाएं व नियमित सिंचाई और गुड़ाई करते रहें।

पशुओं में

गाय-भैंस

वर्षा ऋतु आरंभ हो गई है। अत: गलघोंटू व फड़ सूजने की बीमारी से बचाव के टीके यदि न लगवाए हों तो लगवा दें। जब पशु सायं को बाहर से आता है तो यह ध्यान से देखें कि पशु ने चारा खाना तो नहीं छोड़ दिया। यदि पशु ने चारा खाना छोड़ दिया हो तो आप उसका तापमान लें। यदि उसे बुखार है तो आप अपने नज़दीकी पशु चिकित्सक से संपर्क करें।

पशु से पूरा दूध लेने व नियमित नए दूध में लाने के लिए उसे हरे चारे के साथ 50-60 ग्राम खनिज मिश्रण संतुलित आहार के साथ आवश्यकतानुसार दें।

बरसात में पशु घरों को सूखा रखें और कीचड़ से बचाएं। मक्खी रहित करने के लिए पशु घरों में फिनाइल आदि का घोल छिड़कें। यदि पशुओं को जुएं या चीचड़ लग गई हों तो उन पर 0.5 प्रतिशत मैलाथियान या सुमिथियान तथा पशुओं के आवास में चारों तरफ तथा दीवारों पर मैलाथियान या सुमिथियान 1 प्रतिशत घोल का छिड़काव करें। पशुओं को साफ पानी पिलाएं अन्यथा उनके पेट में कीड़े हो जाते हैं। उनको कीड़ों से मुक्त करने के लिए कृमिनाशक दवा पशु चिकित्सक की सलाह से नियमित रूप से दें।

नवजात बछड़े-बछडियों तथा कटड़े-कटडियों को शुद्ध वातावरण में रखें। उन्हें बीमारी से बचाने के लिए जन्म के पश्चात् आधे से 1 घण्टे के अंदर तथा प्रथम 2-3 दिन खीस अवश्य पिलाएं। खीस पिलाने के लिए जेर गिरने की इन्तज़ार नहीं करनी चाहिए। पैदा होते ही उनके सूण्ड (नाल) को साफ ब्लेड या कैंची से काटकर टिंचर-आयोडीन लगा दें और साफ पट्टी बांध दें। ऐसा करने से सूण्ड सूजने के रोग से बचाव हो सकता है।

भेड़

इस मौसम में भेड़ों को एनटैरोटाक्सीमिया रोग लग जाता है जिसके कारण उनकी आंतों में सूजन आ जाती है। इस रोग से बचाव के लिए अपनी भेड़ों को इस बीमारी से बचाव का टीका अवश्य लगवाएं। भेड़ों के पेट में आजकल के मौसम में कीड़े हो जाते हैं जिसके कारण उनमें बढ़ने की शक्ति कम हो जाती है तथा उनमें ऊन का उत्पादन भी कम हो जाता है। अपने पशु चिकित्सक की सलाह से भेड़ों को नियमित रूप से कृमिनाशक दवा पिलाएं।

कुक्कुट

1. चूजों के ठीक पालन व मुर्गियों से अच्छा अण्डा उत्पादन के लिए यह ज़रूरी है कि गर्मी के मौसम में उनकी खुराक में कमी न हो। खुराक ऐसी हो जो मुर्गियों द्वारा अधिक से अधिक खाई जा सके। इसके लिए खुराक में ''प्रोटीन'' व विटामिनों की मात्रा बढ़ा दें।
2. मुर्गीघरों में ''डीप लिटर'' को दूसरे या तीसरे दिन उलट देना चाहिए। ''डीप लिटर'' गीला रहने से बीमारी फैल जाती है। फफूंद लगी खुराक या वर्षा से भीगी खुराक मुर्गियों को नहीं खिलानी चाहिए।
3. मुर्गीघरों में साफ हवा जानी चाहिए और अधिक मुर्गियों को एक स्थान पर इकट्ठा नहीं होने देना चाहिए। मुर्गीघरों के आसपास पूरी सफाई रखें। मक्खियां व मच्छर मुर्गियों को परेशान करते हैं, जिससे अण्डों की पैदावार घटती है।
4. अण्डे देने वाली मुर्गियों को पुलोरम रोग होने की संभावना हो सकती है। अत: इसकी जांच कराएं।
5. पशु चिकित्सक की सलाह से पेट को कीड़ों से रहित रखने की दवा दें।
6. यदि मुर्गियों के शरीर पर जुएं व चीचडियां हों तो पशु चिकित्सक की सलाह से उन्हें तुरंत नष्ट करें।

घर-आंगन में

घर-आंगन में

हमारे देश में कुपोषण का मुख्य कारण अज्ञानता है। हरी पत्तेदार सब्जियों द्वारा मिलने वाले पोषक तत्वों की कमी हमारे देश में प्राय: पाई जाती है। हरी सब्जियों को घरों में बहुत आसानी से उगाया जा सकता है। हरी पत्तेदार सब्जियां खनिज और विटामिनों का भण्डार होती हैं। इनमें आयरन (लोहा), कैल्शियम, विटामिन 'ए', विटामिन 'सी', फोलिक एसिड तथा रेशे पर्याप्त मात्रा में पाए जाते हैं। इसके अतिरिक्त कुछ ऐसे उत्तम श्रेणी के प्रोटीन भी पाए जाते हैं जो स्वास्थ्य के लिए बहुत लाभकारी हैं क्योंकि ये जीव विष को कम करने में सहायक होते हैं। पत्तेदार सब्जियों में उपस्थित आहार रेशा कब्ज़ को दूर करने में तथा खून को साफ करने में बहुत सहायक है। इसके अतिरिक्त हरी पत्तेदार सब्जियां आंखों के लिए भी अच्छी हैं। अत: दैनिक आहार में हरी पत्तेदार सब्जियों को परम्परागत व्यंजनों में जैसे चपाती, परांठा, चटनी, मिस्सी रोटी, पूरी, दाल, खिचड़ी, उपमा इत्यादि में प्रयोग करते रहना चाहिए। जब यह सब्जियां आसानी से कम मूल्य में उपलब्ध हों तो इन्हें सुखाकर रखा जा सकता है तथा बेमौसम में इनका इस्तेमाल किया जा सकता है।

हरी पत्तेदार सब्जियां बनाते समय कुछ आवश्यक बातें ध्यान में रखें जैसे हरी पत्तेदार सब्जियों को काटने से पहले साफ बर्तन में पानी लेकर अच्छी प्रकार धो लें। उबालने के बाद पानी को नहीं फैंकना चाहिए अपितु आटा आदि बनाने में उस पानी को उपयोग करें। पालक को उबालें नहीं बल्कि गर्म पानी में डालकर उपयोग कर लें ताकि पौष्टिक तत्वों की सुरक्षा कर सकें।

घरेलू स्तर पर खाद्य पदार्थों का सुरक्षित भण्डारण

✍ **पूनम एवं अशोक ढिल्लों**
कृषि विज्ञान केन्द्र, महेन्द्रगढ़
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

हम लोग बाज़ार से खाद्य पदार्थ खरीदते हैं। कुछ लोग घर पर भी चीजें उगाते हैं। खाद्य पदार्थ की खरीददारी करते समय हम बाज़ार में उपलब्ध अनेक पदार्थों में से चयन करते हैं। कुछ पदार्थ सस्ते होते हैं, तो कुछ महंगे, कुछ ताज़े होते हैं तो कुछ बासी, कुछ पदार्थ मौसमी होते हैं तो कुछ गैर मौसमी। खरीदारी के समय ये सभी कारक खाद्य पदार्थ का चयन करने में हमारी मदद करते हैं। हमें जितनी मात्रा में खाद्य पदार्थ की आवश्यकता होती है हम उससे कुछ ज़्यादा ही खरीद लेते हैं। इसलिए खरीदारी के उपरान्त हमारे सामने जो समस्याएं खड़ी होती हैं वह यह है कि खाद्य पदार्थ का भंडारण किस प्रकार किया जाए। यद्यपि हम लोग भंडारण का काम काफी सावधानीपूर्वक करते हैं फिर भी कई बार ऐसा होता है कि जब हम भोजन पकाना आरम्भ करते हैं, तो हम पाते हैं कि कुछ खाद्य पदार्थ खराब हो चुके हैं, सब्जियों में दुर्गन्ध आ गई है, और काफी दालें कीड़ों ने चट कर ली हैं। हम जानते हैं कि प्रत्येक खाद्य पदार्थ की एक निश्चित अवधि होती है जिसके बाद वह खराब होना आरम्भ कर देता है। इस अवधि को 'शेल्फ लाईफ' कहते हैं। 'शेल्फ लाईफ' के आधार पर हम खाद्य पदार्थों को निम्न तीन श्रेणियों में विभाजित कर सकते हैं।

विकारीय खाद्य पदार्थ 1-2 दिन तक सुरक्षित रखने योग्य हैं।

अर्द्धविकारीय पदार्थ कुछ हफ्तों से ले कर 1-2 महीने तक सुरक्षित रहते हैं।

इनकी तुलना में **अविकारीय पदार्थ** कई महीनों तक सुरक्षित रहते हैं।

खाद्य पदार्थों का भण्डारण

अ. अविकारीय खाद्य पदार्थ :

1. अनाज और दालें : साफ सूखे और बन्द बरतन में रखें; चावल के डिब्बे में नमक के डेले या हल्दी का प्रयोग करें; गेहूँ में सूखी नीम की पत्ती मिलाकर रख सकते हैं; विशिष्ट आयुर्वेदिक गोलियों का प्रयोग करें। इन्हें बारीक कपड़े में बांध कर डालें ताकि पकाने से पहले उसे आसानी से निकाला जा सके।

2. चीनी, गुड़, कॉफी, नमक : सूखे और हवा बन्द बर्तन में रखना चाहिए।

ब. अर्द्धविकारीय खाद्य पदार्थ :

1. **सूजी, आटा, मैदा, दलिया आदि :** सूखे और बंद बरतनों या बोतलों में स्टोर करना चाहिए। सूजी और दलिया को स्टोर करने से पहले सूखा भून लेना चाहिए।
2. **मसाले :** हवा बन्द टिन या बोतलों में भण्डारण कीजिये जिससे उनकी शेल्फ लाइफ ज़्यादा हो सके।
3. **घी, तेल, मक्खन :** हवा बन्द बरतन में रखें; एवं टिन को कभी खुला न छोड़ें क्योंकि हवा और नमी के कारण घी/तेल में दुर्गन्ध आ जाती है।
4. **आलू, प्याज़, अदरक, लहसुन :** थैली से निकालकर आलू और प्याज़ को अलग-2 तार की टोकरी में रखना चाहिए; एवं अदरक को गीली बालू में दबाकर छायादार स्थान पर रखकर लम्बे समय तक भंडारण कर सकते हैं।
5. **जैम, जैली, अचार, पापड़, चटनी आदि :** ठंड़े तथा सूखे स्थान पर भण्डारण करें; टिन/बोतल को खुला न छोड़ें; एवं खुले पैकेट/टिन का माल साफ हवा बंद बोतलों में पलट कर रखें।

स. विकारीय खाद्य पदार्थ

1. **सब्जियां और फल :** ठंड़े तथा सूखे स्थान पर भण्डारण करें; गोभी और मूली को पत्तों सहित रखना चाहिए, इससे वे ताज़ा रहती हैं; पत्तेदार सब्जियों को गीले कपड़े में लपेट कर रखिए; फलों को रखने से पहले धोना नहीं चाहिए इससे वह जल्दी खराब होते हैं; एवं नींबू पर तेल की हल्की परत लगा कर रखें।
2. **अण्डे :** स्टोर करने से पहले अण्डों को कभी धोना नहीं चाहिए; अण्डे का नुकीला हिस्सा नीचे की तरफ रखना चाहिए; एवं किसी ठण्डे स्थान पर या टोकरी में हवादार कमरे में रखना चाहिए।
3. **दूध, दही, क्रीम, खोया :** दूध को उबाल कर किसी ठण्डे स्थान पर रखना चाहिए। यदि रैफ्रिजरेटर नहीं है तो दूध को हर 5-6 घंटे बाद उबाल लेना चाहिए ताकि कीटाणु नष्ट हो जायें; ताज़े और बासी दूध को कभी न मिलाएं; दही और क्रीम को ठण्डी जगह में, संभव हो तो रैफ्रिजरेटर में रखना चाहिए; इनको तेज़ गंध वाले खाद्य पदार्थों जैसे- प्याज़, अमरूद, आम आदि से दूर रखना चाहिए क्योंकि यह गंध सोख लेता है; एवं यदि खोए को ठंडे स्थान पर स्टोर न रखा जाए तो इसका मीठा तथा मुलायमपन खट्टे में बदल जाता है।
4. **चीज़ और पनीर :** पनीर के टुकड़ों को हल्का सा तल कर ठंडा करके रखें। इस प्रकार पनीर ज़्यादा देर तक चलता है; एवं ताज़े पनीर को ठण्डे पानी में फ्रिज में एक दो दिन तक रखा जा सकता हैं।
5. **माँस, मछली, मुर्गी :** ठण्डे स्थान पर रखें।
6. **डबलरोटी :** हवा बन्द बर्तन में रखें, ताकि ज़्यादा देर तक ताज़ी रहे तथा ठंड़ी जगह या रेफ्रीजरेटर में रखना चाहिए।

भोजन के सुरक्षित रखरखाव का अर्थ स्वच्छता की दृष्टि से उपयुक्त रखरखाव है। यह स्वास्थ्य के लिए आवश्यक है। असुरक्षित भोजन में कीटाणु होते हैं जिससे बीमारी हो सकती है। भोजन का सुरक्षापूर्वक रखरखाव करना आवश्यक है ताकि उसका सेवन करने वाले हानिकारक प्रभाव से बचे रहें। भारत में, फसल की कटाई के बाद रखा अनाज का नुकसान प्रति वर्ष 20 मिलियन टन से अधिक है, जो कुल खाद्य अनाज का लगभग 10 प्रतिशत है। इतना अनाज ऑस्ट्रेलिया जैसे देश में साल भर में पैदा होता है। इस नुकसान का कारण देश में खाद्य भण्डारण के लिए खराब आधारभूत सुविधा और अवैज्ञानिक पद्धतियां हैं। अत: जो खाद्य पदार्थ आपके पास हैं, अगर आप उसे भली प्रकार सुरक्षित नहीं करते हैं तो वह खराब हो जाएगा। इसका अर्थ यह है कि बढ़िया खाद्य पदार्थ खरीदने का जितना महत्व है उतना ही महत्त्व उन्हें अच्छी प्रकार से सुरक्षित रखने का भी है।

बच्चों के विकास में आंगनवाड़ी केन्द्रों का योगदान

✍ **पूनम रानी, बिमला ढांडा एवं सलोचना**[1]
पारिवारिक विकास एवं मानव संसाधन विभाग
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

बालक के सर्वांगीण विकास की प्रक्रिया में शिक्षा का महत्वपूर्ण योगदान है। शिक्षा जीवन भर चलने वाली प्रक्रिया है। मनुष्य आजीवन किसी न किसी रूप में शिक्षा प्राप्त करता रहता है। शिक्षा द्वारा बच्चे का बौद्धिक, शारीरिक, संवेगात्मक, व्यक्तिगत और सामाजिक विकास होता है। बालक की शिक्षा पर उसके घर, परिवार एवं विद्यालय का प्रभाव पड़ता है। शिक्षा बच्चे के व्यक्तित्व में भी निखार लाती है। बच्चे की नींव मज़बूत करने के लिए हरियाणा सरकार द्वारा समेकित बाल विकास योजना के तहत पूर्व स्कूल शिक्षा का तंत्र तैयार किया गया है। ये सभी अवस्थाएं महत्वपूर्ण हैं क्योंकि बच्चे के सम्पूर्ण विकास पर ये अवस्थाएं केन्द्रित होती हैं।

बाल विकास : इसके अन्तर्गत बच्चों के चहुंमुखी विकास के लिए सभी प्रकार की सुविधाएं देना है। इसके बारे में दूसरा विचार यह है कि विभिन्न अवस्थाओं में बच्चे का विकास किस तरह से होता है अथवा बच्चे किस प्रकार बढ़ते और सीखते हैं। बाल विकास की चार अवस्थाएं हैं : (1) शारीरिक; (2) संवेगात्मक; (3) सामाजिक; एवं (4) ज्ञानात्मक। ये अवस्थाएं एक-दूसरे से जुड़ी हुई हैं। एक अवस्था में बच्चे का विकास दूसरी अवस्था के विकास में भी सहायक है। ये सभी अवस्थाएं महत्वपूर्ण हैं क्योंकि बच्चों के सम्पूर्ण विकास पर ये अवस्थाएं केन्द्रित होती हैं।

आंगनवाड़ी : आंगनवाड़ी का अर्थ है - स्वतंत्र स्कूल शिक्षा। आंगनवाड़ी का चुनाव आंगनवाड़ी वर्कर द्वारा किया जाना चाहिए, क्योंकि आंगनवाड़ी वर्कर उसी गांव की होती है। आंगनवाड़ी जिसमें बच्चों और माताओं को उनके अपने गांवों में या वार्ड में समेकित बाल सेवायें उपलब्ध कराई जाती हैं। आंगनवाड़ी में एक आंगनवाड़ी वर्कर नियुक्त की जाती है जिसकी सहायता एक हैल्पर करती है। आंगनवाड़ी में सभी सेवायें नि:शुल्क प्रदान की जाती हैं।

आंगनवाड़ी के उद्देश्य : आंगनवाड़ी का उद्देश्य बच्चे का सम्पूर्ण विकास करना है। जहां पर ज्ञान स्वाभाविक तौर पर देखते हुए प्राप्त होता है।

समेकित बाल विकास योजना के निम्नलिखित उद्देश्य हैं :

1. छ: वर्ष की आयु के बच्चों के पोषण और स्वास्थ्य की स्थिति को सुधारना।
2. मृत्यु रोग, कुपोषण की प्रवृति को कम करना।
3. बच्चों का उचित मनोवैज्ञानिक, शारीरिक व सामाजिक विकास करना।
4. बच्चों को शिक्षा के लिए प्रोत्साहित करना।
5. अपने बच्चों की पोषण संबंधी आवश्यकताओं की देखभाल के लिए माताओं की क्षमताओं में वृद्धि करना।
6. बाल विकास को बढ़ावा देने के लिए विभिन्न विभागों के कार्यों व नीति में तालमेल स्थापित करना।

आंगनवाड़ी योजना की विषेशताएं : राष्ट्रीय बाल नीति - 1974 के प्रस्तावों के अनुसारण में राज्य के बच्चों एवं महिलाओं विशेष रूप से गर्भवती एवं दूध पिलाती माताओं को बेहतर जीवन के लिए मूलभूत बाल विकास सेवा कार्यक्रम की नीति अपनाई गई। समेकित विकास योजना की विशेषताएं निम्न हैं : पूरक पोषाहार; स्वास्थ्य जांच; संदर्भित सेवाएं; टीकाकरण; पोषाहार एवं स्वास्थ्य शिक्षा; महिला सशक्तिकरण; एवं अनौपचारिक पूर्व स्कूल शिक्षा।

इस प्रकार से आंगनवाड़ी बच्चों के विकास के लिए बहुत उपयोगी सिद्ध हुई क्योंकि इसके द्वारा बच्चों की स्वास्थ्य एवं स्वच्छता जांच, शारीरिक व्यायाम, आहार आदि का प्रबंध किया जाता है। आंगनवाड़ी द्वारा बच्चों के लिए शारीरिक विकास की क्रियाएं भाषा विकास संबंधी क्रियाएं, भावनात्मक तथा रचनात्मक विकास, सामाजिक विकास एवं बौद्धिक विकास करवाया जाता है। इस प्रकार से बच्चों के विकास में आंगनवाड़ी केन्द्रों का अहम् योगदान है।

[1]आंगनवाड़ी वर्कर, गांव बाडों पट्टी (हिसार)

(पृष्ठ 8 का शेष)

यह फलों और सब्जियों की आंतरिक संरचना, दृढ़ता और कोमलता को मापता है, इसी तरह एक्स-रे इमेजिंग तकनीक का पता लगाया गया है। फलों और सब्जियों में उच्च नमी की मात्रा के कारण, एक्स-रे सोखने की क्षमता काफी ज़्यादा होती है और इनसे बाहर निकलने वाली ऊर्जा की तीव्रता उत्पाद के घनत्व और मोटाई पर निर्भर करती है, इसी तरह सीटी स्कैन का उपयोग आंतरिक गुहा, संरचना और फलों की परिपक्वता को मापने के लिए किया जाता है। एक्स-रे परिकलित टोमोग्राफी का उपयोग विभिन्न नमी वाले क्षेत्रों में और सीमित सीमा तक घनत्व वाली जगहों में फलों के आंतरिक क्षेत्रों की इमेजिंग के लिए किया जाता है। यह चित्र वास्तव में फलों में एक्स-रे सोखने की क्षमता के नक्शे हैं जिन से आंतरिक क्षति का मूल्यांकन होता है (थर्मल इमेजिंग तकनीक, जहां किसी भी वस्तु से निकलने वाले तापमान की जानकारी को थर्मल चित्र में बदल दिया जाता है, जो फल के अंदर तापमान फैलाव को दर्शाता है। इस तकनीक का उपयोग पहले से ही सेब में शुरुआती या सूक्ष्म क्षतियों, खट्टे और नाशपाती के फलों में गुणवत्ता नियंत्रण के लिए किया जा रहा है।

किसानों को होने वाले फायदे :

यह तकनीक किसानों को खाद्य उद्योगों को सीधे उनकी सुनिश्चित अच्छी गुणवत्ता की उपज बेचने में मदद करता है और आय में वृद्धि करता है।

किसान समुदाय के उधार के लिए सरकार विभिन्न योजनाओं के माध्यम से फलों और सब्ज़ियों का मूल्यवर्धन करने हेतु कदम बढ़ा रही है।

इन तकनीकों के माध्यम से किसान अपनी फसलों को लंबे समय तक और बिना सड़े स्टॉक में रख सकते हैं ताकि इन्हें अच्छी कीमत पर खरीदारों को बेच सकें।

सरकार द्वारा किसानों की बागवानी फसल के लिए मिशन फॉर इंटीग्रेटेड डेवलपमेंट इन हॉर्टिकल्चर (एमआईडीएच) योजना बनाई है। जिसके तहत प्रगतिशील किसानों को कस्टम हायरिंग पर ये मशीनरी उपलब्ध करवाई जाएगी और इस्तेमाल करने के लिए ट्रेनिंग भी करवाई जाएगी।

प्रगतिशील किसानों की बागवानी उपज को सरकार द्वारा क्षेत्रीय संस्थानों में क्वालिटी इंस्पेक्शन के लिए परखा जा रहा है। विभिन्न मंत्रालय अर्थात कृषि मंत्रालय, खाद्य प्रसंस्करण मंत्रालय, अपेडा, एमपी डीए, कॉफी बोर्ड, चाय बोर्ड, निर्यात निरीक्षण परिषद आदि और संबद्ध एजेंसियां अर्थात महिंद्रा कृषि समाधान लिमिटेड गैर-हानिकारक प्रौद्योगिकियों के माध्यम से उनके उत्पादन को सर्टिफाइड करता है जिस से विदेशी कंपनियां इसे सीधे तौर पर किसान से खरीद सकें और उनकी आय में वृद्धि हो।

किसानों के लिए खाद्य प्रसंस्करण का महत्व

✍ **मोनिका माथुर एवं रवीना कारगवाल**[1]
खाद्य विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी केंद्र
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

आजकल के समय में किसी भी युवा से पूछा जाए कि वो आगे चल कर क्या बनना चाहता है, सभी डॉक्टर, इंजीनियर अथवा किसी सरकारी विभाग में नौकरी पाना ही उनका एकमात्र लक्ष्य बताते हैं। कोई भी युवा किसान नहीं बनना चाहता, इतना ही नहीं बल्कि किसान भी अपने बच्चों को किसान नहीं बनाना चाहते। इसका केवल एक ही कारण है कि खेती के भरोसे जीवनयापन करना और अपने पूरे परिवार की आवश्यकताओं की पूर्ति कर पाना अब आसान काम नहीं रह गया है। कृषि के क्षेत्र में सरकार द्वारा किये गए 2022 तक किसानों की आय दोगुनी करने के वादे तो किये गए हैं, कई महत्वपूर्ण कदम भी उठाये गए हैं, परन्तु सरकार की कोशिशें भी तभी सफल होंगी जब किसान इसका बीड़ा खुद उठायें और खेती को भी एक सफल जीवन यापन के एक विकल्प की तरह लें।

कृषि उत्पादन में बढती बागवानी फसलों की हिस्सेदारी का ही परिणाम है जो वर्ष में देश में खाद्यान्न उत्पादन में उल्लेखनीय वृदि हुई है। इस समयावधि में 30 मिलियन टन खाद्यान्न का उत्पादन किया गया। स्पष्ट है कि देश का पेट भरने वाले अन्नदाता को फसलों के आवर्ती मूल्य में आने वाले उतार-चढ़ाव से सुरक्षित रखा जाना चाहिए।

इस स्थिति में खाद्य प्रसंस्करण क्षेत्र एक अहम् भूमिका का निर्वाह करता है। यह क्षेत्र मूल्य वृद्धि के माध्यम से किसानों को उनके परिश्रम की बेहतर कीमतें प्राप्त करने में एक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है। इस स्थिति से निपटने के लिए किसान यदि खेती के साथ-साथ अपने उत्पादों का प्रसंस्करण करने के लिए छोटी प्रसंस्करण इकाई लगाते हैं तो ये न केवल उनकी आय में बढ़ोत्तरी करेगा बल्कि फसल कटाई के बाद बड़ी मात्रा में नष्ट होने वाले उत्पाद को भी नुकसान से बचाएगा। खाद्य प्रसस्करण के तहत जैसे कि बिस्किट, नानखताई, केक, ब्रेड, पेस्ट्री, मुरब्बा, अचार, पापड़, जेम एवं जेल्ली इत्यादि की छोटी-छोटी इकाई घरेलू स्तर पर ही लगायी जा सकती है।

खाद्य प्रसंस्करण

खाद्य प्रसंस्करण उद्योग का तात्पर्य ऐसी गतिविधियों से है जिसमें प्राथमिक कृषि उत्पादों का प्रसंस्करण कर उनका मूल्यवर्धन किया जाता है। उदाहरण के लिये डेयरी उत्पाद, दूध, फल तथा सब्ज़ियों का प्रसंस्करण, पैकेट बंद भोजन तथा पेय पदार्थ खाद्य प्रसंस्करण उद्योग के अंतर्गत आते हैं। खाद्य प्रसंस्करण में कच्चे माल को मानव उपभोग के लिए भोजन में बदलने के लिए उपयोग की जाने वाली विधियों और तकनीकों को शामिल किया गया है। पशुओं के उपभोग के लिए कच्चे संघटकों को खाद्य पदार्थ में बदलने या खाद्य पदार्थों को अन्य रूपों में बदलने के लिए प्रयुक्त विधियों और तकनीकों का सेट है। आम तौर पर खाद्य प्रसंस्करण में साफ़ फसल या कसाई द्वारा काटे गए पशु उत्पादों को लिया जाता है और इनका उपयोग आकर्षक, विपणन योग्य और अक्सर दीर्घ शेल्फ़-जीवन वाले खाद्य उत्पादों के उत्पादन के लिए किया जाता है। पशु चारे के उत्पादन के लिए भी इसी तरह की प्रक्रियाओं का इस्तेमाल किया जाता है। कई अलग-अलग तरीके हैं जिनमें भोजन का उत्पादन किया जा सकता है।

खाद्य प्रसंस्करण का महत्त्व

दूध, मांस, समुद्री खाद्य पदार्थों में से हानिकारक कीटाणुओं को समाप्त कर, उनमें अन्य पोषक तत्त्व मिलाकर खाने योग्य बनाने के लिये।

खाद्य प्रसंस्करण न केवल खाद्य पदार्थों की उत्तरजीविता को बढ़ाता है अपितु किसानों को होने वाले अतिरिक्त लाभ को सुनिश्चित करता है और नई आर्थिक क्रियाओं को बढ़ावा देता है।

पोषण स्तर में सुधार एवं खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करने के साथ-साथ रोज़गार के नए अवसर सृजित करने में सहायक है।

निर्यात तथा कृषि में विविधता को बढ़ावा देता है।

खाद्य प्रसंस्करण हेतु प्रशिक्षण पाने के लिए विभिन्न सरकारी कृषि विभागों (कृषि विज्ञान केंद्र, भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद्, स्वायत्तता प्राप्त कृषि केंद्र), कृषि विश्वविद्यालय में समय-समय पर प्रशिक्षण एवं कार्यशाला का आयोजन किया जाता है। किसान इन विभागों से संपर्क करके प्रशिक्षण ले सकते हैं और अपनी अन्य समस्याओं का भी निवारण पा सकते है जैसे कि इकाई को स्थापित करने के लिए मशीनरी एवं ऋण कैसे लें इसकी भी जानकारी इन संस्थानों में दी जाती है।

[1]प्रसंस्करण एवं खाद्य अभियांत्रिकी विभाग

(पृष्ठ 6 का शेष)

हल्दी आंतों को स्वस्थ रखकर पाचन संबंधी समस्याओं को दूर करती है।

यह पेट के अल्सर, पेचिश, अपच, कोलाइटिस जैसी समस्याओं को दूर करती है।

हल्दी को रक्त शोधक माना जाता है। यह शरीर में रक्तचाप को नियमित बनाती है। इससे कोलेस्ट्रॉल की मात्रा बहुत हद तक कम हो जाती है।

हल्दी में उपस्थित कैल्शियम और अन्य तत्व सेहतमंद तरीके से वज़न घटाने में मदद करते हैं।

हल्दी में विद्यमान जीवाणुरोधक तथा कवकरोधी गुण शरीर की प्रतिरोधक क्षमता बढाते हैं।

हल्दी को रोगाणुरोधक की तरह उपयोग में लाया जाता है। इसे घाव पर लगाने से खून बंद हो जाता है।

हल्दी कैंसर बढाने वाली कोशिकाओं को बढ़ने से रोकती है तथा इन्हें नष्ट कर देती है।

लेखकों से अनुरोध

हरियाणा खेती के लिए लेख कृपया टाईप करवा कर भेजें अन्यथा लेख स्वीकार नहीं किए जाएंगे। कृपया अपने विभाग का नाम अवश्य लिखें। लेख में अंग्रज़ी शब्दों का प्रयोग न करें। टाईपिंग के लिए **कृति देव फोन्ट का ही प्रयोग करें**। अपना लेख हमें ई-मेल पर भी भेज सकते हैं :

haryanakhetihau@gmail.com

बढ़ता नदी प्रदूषण – एक सामाजिक आर्थिक समस्या

✍ **जतेश काठपालिया, रश्मि त्यागी एवं सुभाष चन्द्र**
समाजशस्त्र विभाग
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

हमारे देश में नदियों का जाल बिछा है, जो कि पर्वत परितन्त्रों से निकलती हैं। इनके जल संसाधन का प्रमुख भाग मैदान में रहने वाली जनसंख्या को मिलता है। हमारे देश में लगभग 113 स्वतंत्र नदियां व हज़ारों सहायक नदियां हैं। इन नदियों के जलग्रहण क्षेत्र को तीन (बड़े, मध्यम एवं लघु) जलग्रहण क्षेत्रों में बांटा गया है। बड़े जलग्रहण क्षेत्र वे हैं, जिनका क्षेत्र 20,000 वर्ग कि.मी. से अधिक, जबकि मध्यम जलग्रहण क्षेत्र 20,000 वर्ग कि.मी. से 2,000 वर्ग कि.मी. है तथा 2,000 वर्ग कि. मी. जलग्रहण क्षेत्र छोटे जलग्रहण क्षेत्र हैं। बड़े और मध्यम वर्ग की नदियां देश के कुल जलग्रहण क्षेत्र का 91 प्रतिशत भाग का निर्माण करती हैं। इनमें से 82 प्रतिशत से अधिक का योगदान बड़ी नदियों का है। बड़ी नदियों में तीन नदियां गंगा, ब्रह्मपुत्र एवं सिन्धु शामिल हैं, जो हिमालय से निकलती हैं।

भारतीय संस्कृति में नदियों को श्रद्धा और आदर की दृष्टि से देखा जाता है। कई नदियों और झीलों के रूप में पानी के प्रचुर प्राकृतिक स्त्रोतों पर विचार करते हुए देखें तो भारत एक प्रसिद्ध देश है। हमारे समाज में लोग नदियों की पूजा देवी और देवताओं के रूप में करते हैं। लेकिन क्या विडम्बना है कि नदियों के प्रति हमारा गहन सम्मान और श्रद्धा होने के बावजूद, हम उसकी पवित्रता, स्वच्छता और भौतिक कल्याण बनाए रखने में सक्षम नहीं हैं। हमारी मातृभूमि पर बहने वाली गंगा, यमुना, ब्रह्मपुत्र और कावेरी या कोई अन्य नदी हो, कोई भी प्रदूषण से मुक्त नहीं है। यह बात गौर करने वाली है कि प्राकृतिक संसाधन के तौर पर हमें समृद्ध बनाने वाली नदियां प्रदूषण के प्रभाव में आकर सामाजिक एवं आर्थिक तौर पर हमें निर्धन बना सकती हैं।

प्रदूषण के स्त्रोत : जल प्रदूषण के बहुत सारे कारक हैं, जो नदी के पानी की समग्र गुणवत्ता को कम करते हैं। इसका मुख्य कारण बढ़ता हुआ शहरीकरण, उद्योग-धन्धे, भू-अपरदन, नदी तट पर कृषि का विस्तार और नदियों में पानी की कमी आदि है। कृषि अपशिष्ट, रसायन, उर्वरक और कृषि में इस्तेमाल किए गए कीटनाशक नदी के जल को दूषित करते हैं। इसके अतिरिक्त नदी के किनारे बसने वाले गांवों, कस्बों एवं शहरों में रहने वाले लोगों द्वारा भी नदी का उपयोग नहाने, कपड़े धोने, पशुओं को नहलाने तथा विभिन्न धार्मिक क्रियाकर्म करने में किया जाता है। नहाने, कपड़े धोने के दौरान डिटरजेन्ट, साबुन, राख आदि का उपयोग और धार्मिक कार्यों में नदियों में मूर्तियां विसर्जन, पूजन सामग्री एवं फूल मालाओं का विसर्जन, नदियों के प्रदूषण को बढ़ाते हैं।

नदियों के प्रदूषण का एक खतरा तैलीय प्रदूषण से भी है। खाना पकाने वाले तेल का उपयोग के पश्चात् विसर्जन, वाहनो में होने वाले पैट्रोल, डीज़ल तथा ऑयल और पैट्रोलियम पदार्थ का अंश, उद्योगों में उपयोग में आने वाले विभिन्न प्रकार के ऑयल किसी न किसी रूप में दूषित जल के साथ नदी में प्रवाहित किए जाते हैं, जो नदी के स्वंय शुद्धिकरण की प्रक्रिया को बाधित करते हैं।

नदी प्रदूषण पर नियन्त्रण : नदियां समाज के सामाजिक, आर्थिक उत्थान में एक महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा करती हैं। इसे देखते हुए भारत सरकार द्वारा प्रवर्तित गंगा क्षेत्र योजना की शुरूआत वर्ष 1986 में गंगा नदी की सफाई के साथ हुई, जिससे गंगा नदी की गुणवत्ता में काफी अनुकूल प्रभाव पड़ा है। इस कार्यक्रम के प्रति एक राष्ट्रीय दृष्टिकोण यह बना कि इसी तरह भारत सरकार के पर्यावरण एवं वन मंत्रालय द्वारा राष्ट्रीय नदी कार्य योजना के अन्तर्गत देश की अन्य नदियों के लिए कार्य किया जा रहा है, जो प्रमुख नदी बेसिनों के एक भाग हैं, इस कार्यक्रम का उद्देश्य प्रदूषित नदी क्षेत्रों की गुणवत्ता को वांछित स्तर तक पुनर्स्थापना करना है। इस योजना के अन्तर्गत नदियों में प्रदूषण के मुख्य स्त्रोतों जैसे घरेलू अपशिष्ट, औद्योगिक अपशिष्ट और गैर बिन्दु स्त्रोतों को उनकी मात्रा के अनुसार लिया जाता है।

इसके अलावा केन्द्र प्रायोजित राष्ट्रीय नदी संरक्षण परियोजना (एन. आर. सी. पी.) के अन्तर्गत केंद्र और राज्य की सरकारें मिलकर कार्य करती हैं। इस योजना के अन्तर्गत 20 राज्यों के 166 शहरों में 37 प्रमुख नदियों के चिन्हित प्रदूषित खण्डों में प्रदूषण कम करने का कार्य चल रहा है। इस कार्यक्रम के अन्तर्गत नदियों में पानी की गुणवत्ता में सुधार के लिए प्रदूषण कम करने के लिए कार्य किए जाते हैं, ताकि पानी नहाने योग्य हो। इसमें अपशिष्ट को नदी में बहने से रोकना तथा उसे शोधन के लिए भेजना, नदी तट पर खुले में शौच पर रोक लगाने के लिए सस्ते शौचालयों की व्यवस्था करना, शवों की अंत्येष्टि के लिए बिजली शवदाह गृह या उन्नत किस्म के जलावन वाले शवदाह गृह की व्यवस्था करना, स्नान के लिए घाटों में सुधार जैसे सौन्दर्यीकरण कार्य करना तथा लोगों के बीच प्रदूषण के प्रति जागरूकता फैलाना शामिल हैं।

इसके अलावा हम सब को भी प्रयास करना होगा जल प्रदूषण नियन्त्रण के लिए, जैसे कि नालों की नियामित रूप से साफ सफाई करना। ग्रामीण इलाकों में ज़्यादातर जल निकास हेतु पक्की नालियों की व्यवस्था नहीं होती है। इस कारण इसका जल कहीं भी अस्त-व्यस्त तरीके से चला जाता है और किसी नदी नहर आदि जैसे स्त्रोत तक पहुंच जाता है। इस कारण नालियों को ठीक से बनाना और उसे जल के किसी भी स्त्रोत से दूर रखने आदि का कार्य भी करना चाहिए। कई उद्योग वस्तु के निर्माण के बाद शेष बची सामग्री जो किसी भी कार्य में नहीं आती है, उसे नदी आदि स्थानों में डाल देते हैं। कई बार आस-पास के इलाकों में भी डालने पर वर्षा के जल के साथ यह नदी या अन्य जल के स्त्रोतों तक पहुंच जाता है। इस प्रदूषण को रोकने हेतु उद्योगों द्वारा सभी प्रकार के शेष बचे पदार्थों का या तो पुन: उपयोग करते हैं या उसे सुरक्षित रूप से नष्ट कर देते हैं। इस प्रकार इन छोटे-छोटे प्रयासों द्वारा भी हम हमारे जल संसाधनों पर मंडरा रहे प्रदूषण रूपी खतरे को कम कर सकते हैं ताकि हमारी आने वाली पीढ़ियों को हम स्वच्छ व निर्मल जल पूरी मात्रा में उपलब्ध करवा सकें।

एक कदम स्वच्छता की ओर

बुखार (ज्वर) में भोजन प्रबंधन

✍ **संतोष रानी[1], राजेश दहिया एवं कान्ता सबरवाल**
विस्तार शिक्षा एवं संचार प्रबंधन विभाग
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

ज्वर या बुखार किसी तरह की बीमारी न होकर अपितु बीमारी विशेष का मात्र लक्षण होते हैं। शरीर में विभिन्न पेचीदा क्रियाओं की वजह से बुखार उत्पन्न होता है तथा सही शब्दों में विभन्न तरह के रोग कीटाणु हमारे शरीर में प्रवेश कर उचित वातावरण में स्थान ग्रहण कर स्वयं की संख्या में वृद्धि करने लगते हैं। दूसरी तरफ रक्त की सफेद कणिका में भी वृद्धि होने लगती है तथा दोनों के बीच संघर्ष होता है। इस कारण शरीर की गर्मी बढ़ती है तथा फिर तापमान बढ़ जाता है जिसे ज्वर या बुखार कहते हैं। ज्वर (बुखार) को दो भागों में विभाजित किया गया है।

अ. अल्पकालिक अवधि के बुखार : ये वो बुखार होते हैं जो थोड़े समय के लिए होते हैं, दवाई लेने के बाद कुछ घण्टों या दिनों में उतर जाते हैं। जैसे खाँसी, जुकाम, गलाशोध, टॉन्सिल, निमोनिया, खसरा इत्यादि।

ब. लम्बी अवधि के बुखार : ये वो बुखार होते हैं जो लम्बी अवधि यानि 2-4 सप्ताह तक बने रहते हैं जैसे टाइफाइड, स्मेटिक, पॉलीमाइलाइटिस, तपेदिक, खसरा, छोटी माता इत्यादि।

भोजन प्रबंधन

कुछ लोगों में यह धारणा होती है कि ज्वर में भूखा रहना हितकारी होता है जिससे स्थिति में जल्दी सुधार हो, सिर्फ भ्रामिक धारणा ही है। ज्वर में भोजन प्रबंध के लिए हमें निम्नलिखित तथ्यों पर ध्यान रखना होता है :

1. बुखार में पसीना आने में काफी ज़्यादा जल, सोडियम, पोटाशियम आदि निकल जाते हैं, जिसकी प्रचुर पूर्ति करनी होती है।
2. ज्वर के कारण शरीर का तापमान बढ़ता है जिससे आधारी उपापचयी ऊर्जा दर बढ़ती है। एक डिग्री सेल्सियस तापमान के बढ़ने पर लगभग 7 प्रतिशत ऊर्जा की मांग बढ़ती है जिसे हमें पूरा करना होता है।
3. संचित ग्लाईकोजन की कमी हो जाती है, जिसकी पूर्ति करनी होती है।
4. ज्वर में प्रोटीन की माँग बढ़ जाती है विशेषकर टाइफाइड में। इसलिए क्षतिग्रस्त कोशिकाओं को पूरा करने के लिए अतिरिक्त प्रोटीन की आवश्यकता होती है।
5. ज्वर में लगभग सभी पोषक तत्वों की मांग बढ़ जाती है जिसे हर हाल में पूरा करना होता है।

अ. अल्पकालिक अवधि के बुखार में भोजन प्रबंधन :

1. प्रथम श्रेणी के अल्पकालिक अवधि के ज्वर में शुरू के 36 या 48 घण्टों तक तरल खुराक ही देनी चाहिए, जिससे ज़्यादा से ज़्यादा कार्बोहाइड्रट, प्रोटीन व कैलोरीज़ प्राप्त हो सकें।
2. थोड़ी-थोड़ी मात्रा में मलाईयुक्त दूध 1-1 या 2-2 घण्टे के अंतर पर देना होगा। दिनभर में लगभग 40 औंस दूध देना होगा जिससे लगभग 35-40 ग्राम प्रोटीन व 650 से 700 कैलोरीज़ प्राप्त हो सकें।
3. दूध के साथ-साथ फलों का रस प्रचुर मात्रा में दें। फलों के रस में ग्लूकोज़ या साधारण शक्कर व थोड़ा इच्छानुसार नमक मिलाना उचित होगा, जिससे कैलोरीज़ की अधिक प्राप्ति हो सके और नमक की कमी भी पूरी होती रहे।
4. क्योंकि ज्वर में पसीने के साथ शरीर का पानी ज़्यादा निकल जाता है अत: जल विशेष रूप से पिलाते रहना होगा। दिनभर लगभग 10 गिलास पानी पिलाना ही होगा। पानी में नमक मिलाना हितकर होगा। यदि साधारण पानी न पिया जाए तो नींबू की शिकंजी, ग्लूकोज़ व नमक मिलाकर देना हितकर होगा।
5. हल्की कॉफी, चाय कोको या दूध हॉर्लिक्स, बोर्नविटा मिलाकर देना भी उपयुक्त होगा।
6. रोगी की इच्छानुसार दाल, सब्जियों और माँसाहारियों को माँस मछली का सूप भी क्रीम के साथ देना हितकर होगा, ताकि उचित मात्रा में प्रोटीन व कैलोरी प्राप्त हो सके।
7. यदि प्रथम 48 घण्टे तक कैलोरीज़ पूर्ण मात्रा में न भी मिल पायें तो चिंता की कोई बात नहीं। 48 घण्टे बाद रोगी की स्थिति में सुधार और उसकी रूचि के अनुसार अर्द्धतरल खुराक दें। जिसमें मट्ठा, दही, दूध, अण्डा, चावल या दही के साथ दलिया या राब दूध के साथ घुटी सब्जियाँ, साबूदाना खीर, घूटी दाल, कस्टर्ड पुडिंग या फलों का रस क्रीम के साथ दें।
8. विटामिन 'ए', 'बी' व 'सी' वर्ग अतिरिक्त मात्रा में देने होंगे।
9. शनै: शनै: सामान्य होने पर प्रोटीन की मात्रा बढ़ाकर 100 ग्राम और उर्जा लगभग 3000 कैलोरीज़ देनी होगी।

ब. लम्बी अवधि के बुखार में भोजन प्रबन्धन :

टाइफाइड - मोतीझारा - में भोजन : जो सिद्धान्त ऊपर बताए गये हैं, उसी के आधार पर भोजन देना होगा। चूंकि इस टाइफाइड में आंतों में ज़ख्म हो जाते हैं जिनमें रक्त बहने का भय रहता है या ज़ख्म के स्थान पर आंतों के फटने का डर रहता है। इस प्रकार भोजन अत्यन्त ही कोमल प्रकृति का होना चाहिए।

1. शुरु के 4-5 दिन तक दूध में अतिरिक्त दूध पाऊडर, दूध-अण्डा, दूध-कॉफी, बॉर्न वीटा, अर्धउबला अण्डा, रसगुल्ला, दूध, साबूदाना, कस्टर्ड पुडिंग इत्यादि दें।
2. साथ-साथ फलों का रस प्र्याप्त मात्रा में दें।
3. विटामिन 'बी' व 'सी' अतिरिक्त मात्रा में दें।
4. इसके पश्चात् लगभग एक सप्ताह तक अर्धतरल खुराक जिसमें दूध-दलिया, दही-दलिया, घूटे चावल दूध या दही के साथ, दूध कॉर्नफलेक्स, सब्जियों का सूप क्रीम के साथ, मांसाहारियों को मांस, मछली का सूप, क्रीम के साथ या मछली इत्यादि दें।
5. फलों का रस ग्लूकोज़ के साथ यथावत् देते रहें।
6. रेशे वाली सब्जियां या फल न दें।
7. शहद व मक्खन के साथ टोस्ट एकदम जैम जैली कस्टर्ड पुडिंग आदि देते रहें। लगभग 3-4 सप्ताह तक इसी प्रकार की खुराक पर रखें, फिर शनै: शनै: कोमल खुराक पर आ जायें।
8. विटामिन 'ए' भी अब पर्याप्त मात्रा में प्राप्त कराएं जो मक्खन, पनीर, कैरोटीन प्राप्त करने वाले फल व सब्जियों से या कलेजी इत्यादि से प्राप्त होगा।
9. यदि पेट में कुछ गड़बड़ हो तो फिर से अर्धतरल या तरल खुराक पर आ जायें।
10. तले पदार्थ व मिर्च मसाले वाले व्यंजन न दें।

(शेष पृष्ठ 24 पर)

[1]ज़िला विस्तार विशेषज्ञ, कृषि विज्ञान केन्द्र, फतेहाबाद।

कैसे हों धात्री (दूध पिलाने वाली) माताओं के वस्त्र

✍ **पारुल गिल, पंकज गिल एवं पूनम मलिक**[1]
वस्त्र एवं परिधान अभिकल्पना विभाग
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

माँ बनना किसी भी महिला के लिए एक सुखद अनुभूति है। वह परिपक्वता की एक और सीढ़ी चढ़ती है। स्तनपान कराना मातृत्व का एक महत्वपूर्ण भाग है। अधितकर धात्री माताएं रोज़मर्रा के साधारण डिज़ाइन वाले वस्त्र पहनती हैं जिससे न सिर्फ शिशु को दूध पिलाने में परेशानी होती है बल्कि दूसरों के सामने झिझक भी होती है। धात्री अवस्था एक विशेष अवस्था है, इसलिए इस अवस्था में विशेष प्रकार के कपड़ों की आवश्यकता होती है अत: आवश्यक है कि धात्री माताएं अपने वस्त्र चुनते समय निम्न बातों का ध्यान रखें :

धात्री माताओं के वस्त्र दूध पिलाने में सहायक डिज़ाइन वाले व आरामदायक होने चाहिएं।

डिज़ाइन ऐसा हो जिससे शिशु को दूध पिलाने में आसानी हो परन्तु जिस पर देखने वाले का ध्यान न जाए। डिज़ाइन देखने में आम वस्त्रों जैसा ही होना चाहिए।

इस अवस्था में छाती का आकार बढ़ जाता है। इसलिए वस्त्र का डिज़ाइन ऐसा होना चाहिए जिससे देखने वाले का ध्यान वस्त्र के अन्य हिस्सों पर न जाए जैसे कि बाँह पर या कमीज़ के निचले हिस्से पर की गई कढ़ाई।

इस अवस्था में छाती की त्वचा संवेदनशील हो जाती है। इसलिए वस्त्र नरम व मुलायम होने चाहिएं।

सिलाई व डिज़ाइन भी ऐसा होना चाहिए जो छाती की त्वचा पर न चुभे।

वस्त्र गीलेपन को सोखने वाला होना चाहिए ताकि अतिरिक्त बहने वाले दूध को सोख सके। सूती वस्त्र के सोखने की क्षमता अच्छी होती है।

वस्त्र ऐसे हों जिनका रख-रखाव व धुलाई आसान हो क्योंकि माता के वस्त्र दुग्धस्राव व शिशु के मल-मूत्र, उल्टी आदि की वजह से बार-बार गंदे होते हैं जबकि माँ के पास समय की कमी होती है।

वस्त्र ऐसे होने चाहिएं जो बार-बार की धुलाई को बर्दाश्त कर सकें।

इस अवस्था में अधिक वस्त्रों की आवश्यकता होती है क्योंकि वस्त्र बार-बार मैले हो जाते हैं। परन्तु बहुत महंगे वस्त्र नहीं खरीदने चाहिएं क्योंकि इस अवस्था के बाद वो काम नही आएंगे।

प्लेन व हल्के रंग के वस्त्रों की बजाय प्रिंटिड व गहरे रंग के वस्त्र इस्तेमाल करने चाहिएं ताकि उन पर दूध के धब्बे ज़्यादा नज़र न आएं।

माता को खास तरह के डिज़ाइन किए हुए अंतर्वस्त्र तथा स्तन पैड इस्तेमाल करने चाहिएं ताकि दुग्धस्राव से वस्त्र खराब न हों।

छाती के ऊपर खुलने वाले डिज़ाइन के वस्त्र पहनने चाहिएं ताकि स्तनपान कराने में परेशानी न हो। उदाहरण के लिए प्रिंसेस लाइन या अंपायर लाइन में खुली जगह वाले डिज़ाइन जो ऊपर से ढके हों।

ऐसा डिज़ाइन भी चुन सकते हैं जिसमें कमीज़ में खुलापन हो जैसे कि अंब्रेला कट डिज़ाइन की कमीज़।

इस समय में वस्त्र केवल माता की ज़रूरत व आराम के लिए ही नहीं बल्कि शिशु को ध्यान में रखकर भी लेने चाहिएं क्योंकि माता के वस्त्र दुग्धपान के समय शिशु की त्वचा के संपर्क में आते हैं और शिशु की त्वचा बहुत ही नाजुक होती है। अत: माता के वस्त्र कृत्रिम रेशों से बने हुए नहीं होने चाहिएं, उन पर किसी प्रकार का सजावटी सामान जैसे लेस, बटन, शीशे, सितारे, धातु के धागों वाली कढ़ाई आदि नहीं होनी चाहिए।

[1]मानव विकास एवं पारिवारिक अध्ययन विभाग

गर्मी के मौसम में स्वास्थ्य सम्बन्धी सुझाव

✍ **वीनू सांगवान एवं मीनू सिरोही**
खाद्य एवं पोषण विभाग
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

यह देखने में आता है कि गर्मी का मौसम आते ही मक्खी, कॉकरोच व विभिन्न प्रकार के अन्य कारकों द्वारा भोजन दूषित करने का खतरा अन्य ऋतुओं की अपेक्षा कई गुना बढ़ जाता है। दूषित भोजन के सेवन करने से हमारे शरीर में विभिन्न प्रकार के इन्फेक्शन व रोगों जैसे डायरिया, पीलिया, मलेरिया, टाइफाइड, खाज, खुजली, एलर्जी इत्यादि की सम्भावना बढ़ जाती है। वहीं दूसरी ओर गर्मी के मौसम में शरीर अत्याधिक पसीना निकलता है जिससे शरीर में इलैक्ट्रोलाइट्स जैसे सोडियम, पोटेशियम इत्यादि व पानी की कमी होने लगती है। अत: गर्मी में होने वाले विभिन्न प्रकार के संक्रामक रोगों, पानी व इलैक्ट्रोलाइट्स की कमी से बचने के लिए कुछ निम्नलिखित बातों को ध्यान में रखना चाहिए:

गर्मी के मौसम में सदैव हल्का, चिकनाई रहित, कम तला भुना, विभिन्न पोषक तत्वों व पानी से भरपूर ताज़ा भोजन करना चाहिए।

एक ही समय में अधिक आहार नहीं लेना चाहिये। खासतौर पर बुजुर्गों व बच्चों को भोजन थोड़े-थोड़े समय के अन्तराल पर लेना चाहिये। गर्मियों में व्रत या लम्बे समय तक भूखा नहीं रहना चाहिये।

हमें अपने आहार में विभिन्न पोषक तत्वों व पानी से भरपूर फलों जैसे तरबूज, खरबूजा, पपीता व अन्य सब्जियां जैसे - ककड़ी, खीरा, प्याज़, टमाटर इत्यादि का सलाद के रूप में अधिक से अधिक सेवन करना चाहिए। साथ ही करेला, लौकी, तोरी, टिण्डा, हरी मिर्च इत्यादि की बनी सब्जी को आहार में प्राथमिकता देनी चाहिए।

जहां तक सम्भव हो फल व सब्जियां साफ, स्वच्छ, पेस्टीसाइड्स से मुक्त व ताजी होनी चाहिएं। फलों व सब्जियों को तब ही काटें जब खानी हों। अधिक समय तक काटकर रखने से उनके पोषक तत्वों पर दुष्प्रभाव पड़ता है व संक्रमण का खतरा भी बढ़ जाता है।

खाना सदैव ताज़ा बना हुआ ही खाना चाहिए। सुबह का बना खाना शाम को कभी भी नहीं खाना चाहिए।

सड़क के किनारे खुले में बिक रहे कटे फल जैसे तरबूज, खरबूजा इत्यादि व खाद्य पदार्थ जैसे समोसे, टिक्की, चाउमिन इत्यादि नहीं खाने चाहिएं। खुले में बन रहे खाद्य पदार्थों पर धूल, मिट्टी जमा होती रहती है व साथ ही मक्खी, मच्छर भी उड़ते रहते हैं जो भोजन को दूषित व रोगों का घर बना देते हैं।

गर्मियों के मौसम में अधिक ठण्डे पेय पदार्थों का सेवन नहीं करना चाहिये। वैसे तो ये हमें ठण्डक प्रदान करते हैं परन्तु इनके लगातार सेवन से पेट में अल्सर का खतरा बढ़ जाता है।

सदैव घर पर बने पेय पदार्थ जैसे नींबू पानी, शिकंजी, जूस, शेक, नारियल पानी, गन्ने का रस, आम का पन्ना, पुदीना पानी इत्यादि को ही अपने आहार में प्राथमिकता देनी चाहिए। बाज़ार में उपलब्ध विभिन्न प्रकार के कार्बोनेटिड पेय पदार्थों में पोषक तत्वों का नितान्त अभाव रहता है तथा चीनी की मात्रा बहुत अधिक रहती है, साथ ही ऐसे पदार्थों में फास्फोरिक अम्ल पाया जाता है जो हड्डियों से कैल्शियम को बाहर निकालता है और धीरे-धीरे हड्डियां कमज़ोर होने लगती हैं। वहीं दूसरी ओर कैफिन युक्त पेय पदार्थ जैसे चाय, कॉफी

इत्यादि का अधिक सेवन भी स्वास्थ्य पर नकारात्मक प्रभाव डालता है।

घर के बाहर निकलते समय अपने साथ पानी की बोतल/नींबू पानी अवश्य लेकर जाना चाहिये।

रात में घर में गन्दे बर्तन नहीं रखने चाहिएं क्योंकि कॉकरोच, मक्खी, इत्यादि का प्रकोप खासकर ग्रामीण घरों में अधिक बढ़ जाता है जिसका सीधा प्रभाव हमारे स्वास्थ्य पर पड़ता है।

दिन भर में कम से कम 8-10 गिलास पानी अवश्य पीना चाहिए। जिससे हमारे शरीर में पानी की कमी न हो। आहार में पेय पदार्थों का अधिक सेवन करना चाहिए।

यदि छोटे बच्चों को किसी कारण डायरिया इत्यादि के कारण पानी की कमी हो रही है तो उन्हें बाज़ार में उपलब्ध ओरल रिहाइड्रेशन सोलुशन (ओ.आर.एस.) का घोल बनाकर दें। बच्चों को घर में ही नमक चीनी का हल्का घोल बनाकर भी थोड़े-थोड़े अन्तराल में दिया जा सकता है।

गर्मियों के मौसम में तेज़ धूप के प्रभाव से अपना बचाव रखना चाहिये। घर, ऑफिस इत्यादि से सुबह/शाम को ही निकलें। स्कूल जाने वाले बच्चों को तेज़ धूप से बचाव के लिए छाता व पानी की बोतल अवश्य उपलब्ध करानी चाहिये।

अधिक नमक व चीनी युक्त पेय पदार्थों/खाद्य पदार्थों को अपने आहार में कम ही शामिल करें अन्यथा उच्च रक्तचाप, शूगर व मोटापा होने की सम्भावना बढ़ जाती है।

खाना खाने से पहले साबुन से हाथ अच्छी प्रकार धोने चाहिएं।

अत: यदि उपर्युक्त सुझावों को ध्यान में रखा जाये तो बच्चे, बड़े व बूढ़े सभी आयु वर्ग गर्मी के मौसम में भी अपने आप को पूर्णरूप से स्वस्थ व एक्टिव रख सकते हैं और उनकी कार्यक्षमता पर तेज़ धूप, गर्मी इत्यादि का कोई दुष्प्रभाव नहीं पड़ेगा।

(पृष्ठ 22 का शेष)

11. ऊर्जा लगभग 2500 से 3000 कैलोरीज़ और प्रोटीन 80 से 100 ग्राम देना ही होगा।

वैसे तो कार्बोहाइड्रेट इस खुराक में ठीक-ठीक मिल ही जाएंगे, फिर भी ग्लूकोज़, शहद, कस्टर्ड पुडिंग, जैम जैली, उबले आलू व अन्य सब्जियों व फलों पर अधिक झुकाव रखना होगा।

खसरा व छोटी माता में भी मोतीझरा (टाइफाइड) के लिए निर्मित भोजन ही दें एवं तपेदिक (टी.बी.) में भी मोतीझरा के लिए निर्मित भोजन ही दें। परन्तु तपेदिक जैसी बीमारी में ज़ख्म पड़ जाते हैं और इन ज़ख्मों में कीटाणु बहुत समय तक बने ही रहते हैं। ज़ख्म में से रक्त निकलता है जो कफ के साथ निकलता है। रोगी का शरीर कृशकाय व कमज़ोर हो जाता है। उसका वज़न लगातार घटता जाता है और पोषण काफी न्यून स्तर का हो जाता है। रक्तहीनता की भी स्थिति बन जाती है। इस प्रकार ऐसे मरीज़ों को उपयुक्त बनाये रखने के लिए उत्तम प्रोटीन, वसा, विटामिन-ए, डी, सी वर्ग की अधिक आवश्यकता पड़ती है। साथ ही आयरन व कैल्शियम की भी भरपूर ज़रूरत होती है। जिससे फेफड़ों के घाव जल्दी भरें और रक्तहीनता की स्थिति में भी वांछित सुधार हो। हाजमे के साथ सूखे मेवे भी दें। विटामिन 'ए' व 'डी' की अतिरिक्त मात्रा भी आवश्यकतानुसार दें।

पशुओं के लिए साइलेज उत्पादन

✍ **वीनस, ज्योति शून्थवाल एवं सज्जन सिहाग**

पशु पोषण विभाग

लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार

हरे चारे को हवा की अनुपस्थिति में गड्ढे के अन्दर रसदार परिरक्षित अवस्था में रखने से चारे में लैक्टिक अम्ल बनता है जो हरे चारे का पीएच कम कर देता है तथा हरे चारे को सुरक्षित रखता है। इस सुरक्षित हरे चारे को साईलेज (पसंहम) कहते हैं। अधिकतर किसान भूसा या पुआल का उपयोग करते हैं जो साईलेज की तुलना में बहुत घटिया होते हैं क्योंकि भूसा या पुआल में से प्रोटीन, खनिज तत्व एवं उर्जा की उपलब्धता कम होती है।

साईलेज बनाने के लिए फसलों का चुनाव

दाने वाली फसलें जैसे मक्का, ज्वार, जई, बाजरा आदि साईलेज बनाने के लिए उतम फसलें हैं क्योंकि इनमें कार्बोहाइड्रेट की मात्रा अधिक होती है। कार्बोहाइड्रेट की अधिकता से दबे चारे में किण्वन क्रिया तीव्र होती है। दलहनीय फसलों का साइलेज अच्छा नहीं रहता परन्तु दलहनीय फसलों को दाने वाली फसलों के साथ मिलाकर साईलेज बनाया जा सकता है। अन्यथा शीरा या गुड़ के घोल का उपयोग किया जाए जिससे लैक्टिक अम्ल की मात्रा बढाई जा सकती है।

साईलेज बनाने के लिए फसल की कटाई की अवस्था

दाने वाली फसलों जैसे मक्का, ज्वार, जई आदि को साईलेज बनाने के लिए जब दाने दूधिया अवस्था में हों तो काटना चाहिए। इस समय चारे में 65-70 प्रतिशत पानी रहता है। अगर पानी की मात्रा अधिक है तो चारे को थोडा सुखा लेना चाहिए।

साईलेज के गड्ढों के लिए जगह का चुनाव

साईलेज बनाने के लिए गड्ढों के लिए जगह का चुनाव बहुत महत्वपूर्ण है :

1. गड्ढे हमेशा ऊंचे स्थान पर बनाने चाहिएं जहां से वर्षा के पानी का निकास अच्छी तरह हो सके।
2. भूमि में पानी का स्तर नीचे हो।
3. साईलेज बनाने का स्थान पशुशाला के समीप हो।

गड्ढे बनाना

साईलेज बनाने के लिए गड्ढे कई प्रकार के होते हैं। गांवों में साईलेज बनाने के लिए खत्तियां काफी सुविधाजनक और उपयोगी होती हैं। गड्ढों का आकार उपलब्ध चारे व पशुओं की संख्या पर निर्भर करता है। गड्ढों के धरातल में ईंटों से तथा चारों ओर सीमेंट एवं ईंटों से भली भांति भराई कर देनी चाहिए। जहां ऐसा सम्भव न हो सके वहां पर चारों ओर धरातल की गीली मिट्टी से खूब लिपाई कर देनी चाहिए और इनके साथ सूखे चारा की एक तह लगा देनी चाहिए या चारों और दीवारों के साथ पॉलीथीन लगा दें।

गड्ढों को भरना तथा बन्द करना

जिस चारे का साईलेज बनाना है उसे काट कर थोडी देर के लिए खेत में सुखाने के लिए छोड़ देना चाहिए। जब चारे में नमी 70 प्रतिशत के लगभग रह जाये उसे कुट्टी काटने वाली मशीन से छोटे-छोटे टुकडों में काट कर गड्ढों में अच्छी तरह दबाकर भर देना चाहिए। छोटे गड्ढों को आदमी पैरों से दबा सकते हैं जबकि बडे गड्ढे ट्रैक्टर चलाकर दबा देने चाहिएं। जब तक ज़मीन की सतह से लगभग एक मीटर ऊचां ढेर न लग जाये भराई करते रहना चाहिए।

(शेष पृष्ठ 27 पर)

भिंडी की फसल : माइट की रोकथाम

✍ **बजरंग लाल शर्मा, अनिल एवं नरेश कुमार**[1]
कीट विज्ञान विभाग
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

भिंडी को हानि पहुँचाने वाली लाल रंग की माइट टेट्रनिकस सिन्नबेरिनस (*Tetranychus Cinnabarinus*) कीटों की तरह ही होती है जिनमें आठ पैर (चार जोड़ी) होते हैं। माइट का शरीर दो भागों सिर एवं उदर में विभक्त होता है। इनका रंग भूरा लाल होता है माइट के ऊपर वाले भाग पर प्राय: दो गाढ़े रंग के धब्बे होते हैं। तापमान बढ़ने पर माइट की संख्या तेज़ी से बढ़ती है।

अण्डे प्राय: सफेद रंग के होते हैं जो बाद में पीले हो जाते हैं। लारवा जिसके छ: पैर होते हैं बाद में निम्फ में परिवर्तित हो जाता है जिनमें आठ पैर होते हैं। वे पीलापन लिए होते हैं निम्फ बाद में वयस्क बन जाते हैं। गर्म तथा शुष्क में जीवन चक्र जल्दी होता है। इस प्रकार एक ही फसल पर कई पीढ़ियां पूरी हो जाती हैं। ठंडे मौसम में मादा सुषुप्त अवस्था में चली जाती है और मौसम गर्म हो जाने पर फिर सक्रिय हो जाती है।

नुकसान

लाल माइट से भिंडी की फसल को प्रतिवर्ष लगभग 20-25 प्रतिशत तक नुकसान होता है। लाल माइट के मुखांग सूई जैसे होते हैं जिसे यह पत्तियों या टहनियों की कोशिकाओं में चुभाकर उनका रस चूस लेती है। इस माइट के निम्फ तथा वयस्क दोनों ही अवस्थायें पत्तियों की निचली सतह से रस चूसती हैं। इससे क्लोरोफिल नष्ट हो जाता है परिणामस्वरूप पत्तियों पर पहले छोटे-छोटे हल्के सफेद रंग के सुई के नोक के समान धब्बे दिखाई देते हैं बाद में पीले रंग के धब्बे हो जाते हैं। जो खेत में दूर से ही दिखाई देते हैं। धीरे-धीरे पत्तियां पीली हो जाती हैं और सूखकर गिर जाती हैं। अधिक आक्रमण होने पर माइट पौधों एवं तने पर मकड़ी के समान जाले बना लेती हैं एवं उस जाल में अण्डे एवं माइट की सभी अवस्थायें पाई जाती हैं। अधिक प्रकोप होने पर लाल माइट फलों व पत्तों की नोक पर एकत्रित हो जाती हैं।

माइट पत्तियों के अतिरिक्त कोमल शाखा से भी रस चूसती हैं तथा पौधों की प्रकाश संश्लेषण क्रिया को प्रभावित करती हैं जिससे पौधा कमज़ोर हो जाता है। प्रभावित पौधों में फल छोटे लगते हैं और गुणवत्ता में भी कमी आ जाती है।

रोकथाम

अधिक प्रकोप वाली टहनियों व पत्तियों को तोड़कर नष्ट कर देना चाहिए।

सादे पानी का फसल पर छिड़काव करने से भी काफी संख्या में माइट मर जाती है।

फसल कटाई के बाद खरपतवार व फसल अवशेषों को एकत्रित करके जला देना चाहिए।

लाल माइट की रोकथाम हेतु प्रेम्पट 20 ई.सी. नाम की दवा 300 मि. ली प्रति एकड़ के दो छिड़काव 10 दिन के अंतराल पर करें। आवश्यकता पड़ने पर 10-15 दिन बाद फिर इस दवा का छिड़काव दुबारा करें।

[1]मौसम विज्ञान विभाग

बच्चों में भाषा कौशल का विकास

✍ **रीना, रीतु एवं बिमला ढांडा**
मानव विकास एवं पारिवारिक अध्ययन विभाग
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

भाषा विकास एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें सुनने एवं बोलने की शुरुआत मानवीय जीवन के बचपन में ही शुरू हो जाती है । शिशुओं का विकास, भाषा के बिना शुरू होता है। फिर भी 10 महीने तक, बच्चे भाषा की आवाज़ को अलग-अलग पहचान सकते हैं। वे अपनी मां की आवाज़ को बहुत ही अच्छी तरह से पहचानने लगते हैं। शिशुओं में भाषा का विकास, जैसे-जैसे बच्चा शारीरिक एवं मानसिक रूप से बड़ा होता जाता है भाषा के प्रति भी उनकी व्यवहारिक प्रतिक्रिया भी विकसित होती जाती है। भाषा विकास का बच्चों के बौद्धिक स्तर से सीधा संबंध है। माँ-बाप को अपने बच्चों को जन्म के कुछ महीनों बाद से ही खेल-खेल में छोटी-छोटी बातें सिखा देनी चाहिएं।

भाषा का विकास : जन्म से लेकर पांच साल तक

जन्म से तीन माह के दौरान भाषा का विकास : इस अवधि में बच्चा सबसे अधिक हंसी और ध्वनियों के साथ खेलता रहता है। इशारों के साथ संवाद करना शुरू करता है। बच्चों को कुईंग और गर्गलिंग करने में आनंद आता है। बबलिंग पहले वर्ष के दौरान की एक महत्वपूर्ण विकासात्मक अवस्था मानी जाती है।

तीन महीने से छह महीने तक : इस अवस्था में बच्चा अपनी माँ की आवाज़ को पहचाने लगता है। जैसे - अगर बच्चा रो रहा हो तो अपनी माँ की आवाज़ सुन कर चुप हो जाता है। जब कोई नई आवाज़ को सुनता है तो बच्चा हंसता है। बच्चों को बबलाने में आनंद आता है। बच्चा एक ही आवाज़ के क्रम को बार-बार दोहराता रहता है जैसे कि दा... दा... बा... बा... पा...पा... इत्यादि।

छह महीने से नौ महीने तक : इस अवस्था में बच्चा विभिन्न प्रकार की आवाज़ निकालने में आनंद लेता है। साथ ही उसका बबलाना निरंतर जारी रहेगा। बच्चों में इतना विकास हो जाता है जिस तरफ से आवाज़ आती है उसी तरफ अपने सिर को घुमा लेता है और नई-नई आवाज़ों को लगातार सुनने में रूचि रखता है।

नौ महीनों से दो साल तक : बच्चा न जैसे शब्दों को समझने लगता है और छोटी-छोटी बातों को मानने लग जाता है जैसे कि आंखें बंद करो और खोलो, अपना मुँह खोलो और बंद करो इत्यादि। वह अपनी आवाज़ से औरों का ध्यान आकर्षित करने की कोशिश करता है और आपके द्वारा बोले गए कुछ शब्दों की नकल करने की भी कोशिश करता है।

दो साल से लेकर ढाई-तीन साल तक : इस अवस्था में बच्चा आपके आदेशों को मानने लग जाता है। वह अन्य वस्तुओं की तरफ इशारा और चीज़ों को देख कर मांगने लग जाता है। जैसे कि गेंद दो मुझे, मैं इसके साथ खेलूँगा। यदि आपका बच्चा इशारों को नहीं समझ पा रहा है, तो आप अपने बच्चे को डॉक्टर को दिखाएं या अन्य किसी प्रशिक्षण एवं परामर्श दाता से बात करें।

तीन साल से लेकर पांच साल तक : बच्चा चार शब्दों से ज़्यादा के वाक्यों का इस्तेमाल करने लग जाता है। भावनाओं और वस्तुओं को पहले से बेहतर समझता है। पूर्ण वाक्यों को दोहराना, छोटी-छोटी कहानियां को सुनना और उससे जुड़े सवालों के जवाब देना, घर और स्कूल में की जाने वाली सभी बातों को समझना, बड़ों के साथ बात करना, कुछ अक्षरों और नंबरों को पहचाने लग जाता है। जानवरों और पक्षियों जैसे समान वस्तुओं

में अंतर को भी बताने लग जाता है।

अपने बच्चे के शुरुआती भाषा के विकास को कैसे प्रोत्साहित करें

अपने बच्चे के सुनने और बोलने के विकास को प्रोत्साहित करने का सबसे अच्छा तरीका है कि आप अपने बच्चे की रुचि रखने वाली चीज़ों के बारे में बहुत सारी बातें करें। उनसे पूछे तुम्हें ये वस्तु पसंद हैं या नहीं।

बच्चों को स्कूल में सहज होने का मौका दें। इससे बच्चे की झिझक टूटेगी और बच्चे को स्कूल के माहौल के साथ ढलने का मौका भी मिलेगा। एक-दो सप्ताह तक बच्चों के साथ यह गतिविधि जारी रखें। बच्चों के साथ बातचीत करें और कहानियां सुनाएं। बच्चों को घर की भाषा में बात करने का अवसर दें और विभिन्न गतिविधियों में भाग लेने के लिए उनको प्रोत्साहित करें।

कहानी के माध्यम से बच्चों की सुनकर समझने की क्षमता पर काम करें, कहानी सुनाने के लिए चित्रों वाली किताब का उपयोग करें और बच्चों की जिज्ञासा का जवाब देने की कोशिश करें।

चौथे-पाँचवें सप्ताह से बच्चों को पेंसिल पकड़ना, किताब और कॉपी खोलना और देखना सीखने का अवसर दें। ताकि वे इन चीजों के साथ सहज हो सकें। हर बच्चे की अलग-अलग क्षमता होती है, इसलिए सारे बच्चों से एक जैसी अपेक्षा न रखें। बच्चों के साथ दो सप्ताह तक आड़ी-तिरछी रेखाएं व गोला बनाने जैसी गतिविधियों के बाद अक्षर पढ़ने और लिखने की शुरुआत करें।

अपने बच्चे से सरल और अच्छे ढंग से प्रश्न पूछें और जवाब देकर बातचीत जारी रखें। जब आपका बच्चा कुछ मांगता है आप उसे वापिस देने के लिए भी कहिए। सरल और पूर्ण वाक्यों में बोलना जारी रखें और सीखने के लिए बच्चे पर ज़्यादा दबाव डालने की कोशिश न करें कि वह हर रोज़ एक अक्षर सीखे ही।

बच्चों को एक दिन में केवल एक अक्षर पढ़ना सिखाएं और ये आदत बनाएं। उसे लिखने का तरीका भी सिखाएं। लिखने-पढ़ने की शुरूआत सबसे पहले बड़ी मात्राओं वाले अक्षरों या बार-बार आने वाले अक्षरों से करें, जैसे - क, ख, र, आ, ए, म, न, य इत्यादि।

माँ-बाप को अपने बच्चों को ये भी सिखाना चाहिए, जब घर पर कोई मेहमान आए तो उनसे मिले एवं बातें करे। इससे बच्चों की न सिर्फ झिझक खुलेगी बल्कि अच्छी आदत भी सीखेगा और साथ ही साथ भाषा का भी विकास होगा।

उनसे प्यार से बातें करें और खुल कर बोलने के लिए प्रोत्साहित करें, इससे बच्चों की झिझक टूटेगी।

ध्यान देने योग्य बातें :

वैसे तो भाषा के विकास में देरी के बहुत से कारण हो सकते हैं लेकिन मुख्य रूप से इसका कारण सामान्य देरी है। बच्चे के जीवन के पहले 3 साल भाषा और बोली विकास के लिए एक महत्वपूर्ण अवधि है इस दौरान बच्चे का मस्तिष्क तेज़ी से विकास कर रहा होता है। इस दौरान बच्चों को पर्याप्त रूप से बातचीत का मौका न मिलने से भाषा का विकास ठीक ढंग से नहीं हो पाता।

सुनने की समस्या भी भाषा को प्रभावित करती है। कुछ बच्चों में संरचनात्मक विकृतियां हो सकती हैं, जैसे कि जीभ, तालु की समस्याएं।

इनके अलावा, किसी भी प्रकार की मानसिक कमज़ोरी भी भाषा को प्रभावित कर सकती है। सबसे बड़ी बात, आपके बच्चे को बोलने और सुनने के लिए जितने अधिक मौके मिलेंगे उतनी ही जल्दी झिझक खुलेगी, फिर वह खुल कर बात करेगा और उतनी ही बेहतर भाषा या बोली का विकास होगा।

घीया की वैज्ञानिक विधि से खेती

✍ **मक्खन मजोका, शिवानी कम्बोज एवं धर्मवीर दुहन**
सब्जी विज्ञान विभाग
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

घीया एक कद्दूवर्गीय महत्वपूर्ण सब्जी है। इसको लौकी के नाम से भी जाना जाता है। इसके मुलायम फलों में प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट, खाद्य रेशा, खनिज लवण के अलावा प्रचूर मात्रा में अनेक विटामिन्स भी पाए जाते हैं। लौकी की प्रकृति ठंडी होती है। इसके फल सुपाच्य होने के कारण चिकित्सक रोगियों को लौकी की सब्जी अधिक से अधिक खाने की सलाह देते हैं। लौकी के हरे फलों से सब्जी, रायता, खीर, कोफ्ते, अचार एवं मिठाइयां बनाई जाती हैं। इसका बाहरी आवरण संगीत यंत्र बनाने के काम भी आता है।

उन्नत किस्मों का चुनाव

घीया के लिये चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय द्वारा सिफारिश किस्मों की बिजाई करें।

1. पूसा समर प्रोलीफिक लौंग : यह किस्म गर्मी व बरसात दोनों मौसम में उगाने के लिए उपयुक्त है। इस किस्म में फल काफी संख्या में लगते हैं और बेलों की बढ़वार भी काफी होती है। कच्चे फलों की लम्बाई 40-50 सैं.मी. व फलों का रंग हल्का हरा होता है। इसकी औसत पैदावार 56-60 क्विंटल प्रति एकड़ है।

2. पूसा समर प्रोलीफिक राऊण्ड : यह किस्म भी गर्मी व बरसात दोनों मौसम के लिए उपयुक्त है। इसके कच्चे फल 15 x 18 सैं.मी. घेरे के गोल व हरे रंग के होते हैं।

3. घीया हिसार 22: यह किस्म भी ग्रीष्म व बरसात ऋतु में उगाने के लिए उपयुक्त है। इस किस्म की बेलों की बढ़वार अच्छी होती है, साथ ही साथ उन पर फल भी ज़्यादा मात्रा में लगते हैं। इसके कच्चे व खाने योग्य हल्के हरे फलों की औसत लम्बाई लगभग 30 सैं.मी. होती है। इसकी औसत पैदावार 100-120 क्विंटल प्रति एकड़ है।

4. हिसार घीया संकर 35 : यह घीया की एक संकर किस्म है। इसके फल बेलनाकार व बेल पर ज़्यादा मात्रा में लगते हैं तथा बेलों की बढ़वार अच्छी होती है। इस किस्म को ग्रीष्म व वर्षा दोनों ऋतु में उगाया जा सकता है। कच्चे व खाने योग्य हरे फलों की औसत लम्बाई लगभग 25-30 सैं. मी. होती है। इसकी औसत पैदावार 120-140 क्विंटल प्रति एकड़ है।

भूमि की तैयारी

वैसे तो घीया की फसल हर प्रकार की भूमि में हो सकती है लेकिन उचित जल निकास युक्त प्रचुर जीवांश से युक्त चिकनी बलुई मिट्टी इसकी खेती के लिए सबसे उत्तम मानी गई है। इसके लिए भूमि का पी.एच. मान उदासीन होना चाहिए। उदासीन का मतलब न अम्लीय और न ही क्षारीय अर्थात 6.0 से 7.0 के बीच में होना चाहिए। बिजाई से 3-4 सप्ताह पहले गोबर की सड़ी गली खाद खेत में अच्छी तरह मिला दें, फिर 3-4 बार जुताई करें। हर जुताई के बाद सुहागा लगाएं।

बिजाई का समय

गर्मी की फसल के लिए फरवरी-मार्च तथा बरसात की फसल के लिए जून-जुलाई का समय बिजाई के लिए उपयुक्त है।

बीज की मात्रा

घीया की बिजाई के लिए 1.5 से 2 कि.ग्रा. बीज प्रति एकड़ काफी

रहता है। बिजाई से पहले बीज को रात भर पानी में भिगो लेना चाहिए ताकि बीज का अंकुरण अच्छा हो।

बिजाई की विधि

घीया के बीजों को थोड़ी उठी हुई क्यारियों में नालियों के किनारे पर बोएं जिनकी चौड़ाई 2-3 मीटर तथा लम्बाई सुविधानुसार रखें। दो या तीन बीज एक जगह पर 3-4 सैं.मी. की दूरी पर बोयें और पौधे पर जब 2 से 3 सच्ची पत्तियां आ जाएं, तब केवल एक स्वस्थ पौधा रखकर शेष पौधों को निकाल दें। पौधों के बीच की दूरी 60 सैं.मी. रखें।

खाद व उर्वरकों का प्रयोग

छ: टन गोबर की सड़ी-गली खाद, 20 कि.ग्रा नाइट्रोजन, 10 कि.ग्रा. फास्फोरस, 10 कि.ग्रा. पोटाश की शुद्ध मात्रा प्रति एकड़ डालें। बिजाई के समय फास्फोरस व पोटाश की सारी मात्रा व नाइट्रोजन की आधी मात्रा बिजाई वाले स्थानों पर बराबर मात्रा में ड़ालें। बची हुई नाइट्रोजन की आधी मात्रा को दो बराबर हिस्सों में बांटकर एक महीने बाद व फूल आने पर नालियों में डालकर मिट्टी चढाएं।

सिंचाई

बिजाई बत्तर में करें, अगर बिजाई सूखें में की है, तो तुरंत ही हल्का पानी लगाएं। गर्मी के मौसम में 5-7 दिनों के व बरसात के मौसम में 8-10 दिनों के अन्तराल पर सिंचाई करें। बरसात के मौसम में सिंचाई वर्षा पर निर्भर करती है।

जहाँ सिंचाई के लिए पानी तैलीय (सोडिक) हो वहां पानी में एक मि. ली. तुल्यांक प्रति लीटर आर.एस. सी. को निरस्थीकरण करने के लिए जिप्सम 32 किलोग्राम (80 प्रतिशत शुद्धता) प्रति सिंचाई प्रति एकड़ तथा 8 टन गोबर की सड़ी हुई खाद प्रति एकड़ डालें। इससे घीया की फसल पर तैलीय पानी का प्रभाव कम हो जाएगा, साथ ही साथ अच्छी पैदावार भी मिलेगी।

वृद्धि नियामकों का प्रयोग

दो व चार सच्ची पत्तियाँ आने की अवस्था मे पत्तों पर 4 मि.ली. इथरेल (50 प्रतिशत) के घोल को 20 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़काव करें। इससे मादा फूल ज़्यादा संख्या में लगते हैं, अन्तत: पैदावार बढ जाती है। कोई चिपचिपा पदार्थ घोल में मिलाना न भूलें।

अन्त: कृषि क्रियाएं एवं खरपतवार नियन्त्रण

दोनों ऋतु में सिंचाई के बाद खेत में काफी मात्रा में खरपतवार उग जाते हैं। खरपतवार के नियन्त्रण के लिए एक या दो गुड़ाई की आवश्यकता पड़ती है। प्रारम्भिक अवस्था में ट्रैक्टर की टिलर के द्वारा भी खरपतवार को नियंत्रित किया जा सकता है क्योंकि तब पौधे छोटे होते हैं।

फलों की तुड़ाई व पैदावार

ज़्यादा पके फल खाने के लिए उपयुक्त नहीं होते हैं, इसलिए उनको कच्ची अवस्था में तोड़ें जब उनका रंग हरा हो। फलों का वज़न किस्मों पर निर्भर करता है। मुलायम फलों की तुड़ाई डण्ठल लगी अवस्था में किसी तेज़ चाकू से करें।

औसत पैदावार

40-60 किवंटल/एकड़

हानिकारक कीड़े व उनकी रोकथाम

घीया में लालड़ी, तेला, चेपा, माईट, फल मक्खी और जड़ गांठ सूत्रकृमि का प्रकोप होता है। लालड़ी के लिए 25 मि.ली. साईपरमेथरिन 25 ई.सी. या 30 मि.ली. फेनवेलरेट 20 ई.सी. नामक रसायन के घोल को 100 लीटर पानी में घोल कर एक एकड़ में छिड़काव करें। तेला, चेपा और माईट के लिए मैलाथियान 250 मि.ली. 50 ई.सी. और फल मक्खी के लिए मैलाथियान 400 मि.ली. 200-250 लीटर पानी में प्रति एकड़ के हिसाब से छिड़काव करें। घीया में जड़ गांठ सूत्रकृमि की रोकथाम के लिए बिजाई से एक सप्ताह पहले नीम की खल 30 ग्राम प्रति स्थान की दर से मिट्टी में मिलाएं व बीज को बायोटिका से उपचारित करें।

बेल वाली सब्जियों में बीमारियां

घीया में चिट्टा रोग, एन्थ्रैक्नोज़, डाऊनी मिल्ड्यू व मोजैक रोग नामक बीमारियों का प्रकोप होता है।

रोकथाम

1. पाऊडरी मिल्ड्यू की रोकथाम के लिए 8-10 किलोग्राम प्रति एकड़ गंधक का धूड़ा छिड़काव करें।
2. एन्थ्रैक्नौज़ व डाऊनी मिल्ड्यू की बीमारियों में रोकथाम के लिए 400 ग्राम एण्डोफिल एम-45 दवा 200 लीटर पानी प्रति एकड में छिड़काव करें।

सावधानियां

1. सिफारिश की गई कीटनाशक ही डालें, क्योंकि घीया कुछ अन्य कीटनाशकों से जल सकती है।
2. ओस के समय धूड़ा न करें।
3. खराब व सड़े फल एकत्रित करके मिट्टी में गहरा दबा दें।
4. कीटनाशक के छिड़काव से पहले फल तोड़ लें।

(पृष्ठ 24 का शेष)

भराई के बाद उपर से गुम्बदाकार बना दें और पॉलिथीन या सूखे घास से ढक कर मिट्टी अच्छी तरह दबा दें और उपर से लिपाई कर दें ताकि इस में बाहर से पानी तथा वायु आदि न जा सके।

गड्ढों का खोलना

गड्ढे भरने के तीन महीने बाद गड्ढों को खोलना चाहिए। खोलते समय ध्यान रखें कि साईलेज एक तरफ से परतों में निकाला जाए और गड्ढे का कुछ हिस्सा ही खोला जाए तथा बाद में उसे ढक दें। गडढा खोलने के बाद साईलेज को जितना जल्दी हो सके पशुओं को खिलाकर समाप्त करना चाहिए। गड्ढे के उपरी भागों और दीवारों के पास में कुछ फफूंदी लग जाती है। यह ध्यान में रखें कि ऐसा साईलेज पशुओं को नहीं खिलाना चाहिए।

पशुओं को साईलेज खिलाना

सभी प्रकार के पशुओं को साईलेज खिलाया जा सकता है। एक भाग सूखा चारा, एक भाग साईलेज मिलाकर खिलाना चाहिए। यदि हरे चारे की कमी हो तो साईलेज की मात्रा ज़्यादा की जा सकती है। साईलेज बनाने के 30-35 दिन बाद साईलेज खिलाया जा सकता है। एक सामान्य पशु को 20-25 कि.ग्रा. साईलेज प्रतिदिन खिलाया जा सकता है। दुधारू पशुओं को साईलेज दूध निकालने के बाद खिलायें ताकि दूध में साईलेज की गन्ध न आ सके। यह देखा गया है कि बढिया साईलेज में 85-90 प्रतिशत हरे चारे के बराबर पोषक तत्व होते हैं। इसलिए चारे की कमी के समय साईलेज खिलाकर पशुओं का दूध उत्पादन बढाया जा सकता है।

Water Management for Agricultural Development and Food Security

✍ Sube Singh, Vijay[1] and Rahul Kumar[2]
Directorate of Extension Education
CCS Haryana Agricultural University, Hisar

Water is key to food security. Crops and livestock need water to grow. Agriculture requires large quantity of water for irrigation and other production processes. While feeding the world and producing a diverse range of non-food crops such as cotton, rubber and industrial oils in an increasingly productive way, agriculture also confirmed its position as the biggest user of water on the globe. Irrigation now claims close to 70% of all freshwater appropriated for human use.

In 1948, the Universal Declaration of Human Rights affirmed the right of everyone to adequate food. However, access to adequate food in the rural areas of many developing countries depends heavily on access to natural resources, including water, that are necessary to produce food. The UN General Assembly declared access to clean drinking water and sanitation as a human right on July 28, 2010. But the right to water in the context of the right to food is a complex question. While drinking and cooking water would be protected. Water for food production would probably not be covered under the minimum needs in arid areas.

Food Security

The World Food Summit of 1996 defined food security as existing when all people, at all times, have physical, social and economic access to sufficient, safe and nutritious food to meet dietary needs for a productive and healthy life.

Important Facts :

The world population is predicted to grow from 7 billion in 2018 to 8.3 billion in 2030 and to 9.1 billion in 2050. By 2030, food demand is predicted to increase by 50% (70% by 2050). The main challenge facing the agricultural sector is not so much growing 70% more food in 40 years, but making 70% more food available in the plate.

Roughly 30% of the food produced worldwide (about 1.3 billion tons) is lost or wasted every year, which means that the water used to produce it is also wasted. Agricultural products move along extensive value chains and pass through farmers, transporters, store keepers, food processors, shopkeepers and consumers as it travels from field to fork.

Producing one kilo of rice, for example, requires about 3,500 litres of water, one kilo of beef some 15,000 litres, and a cup of coffee about 140 litres. This dietary shift is the greatest impact on water consumption over the past 30 years.

In 2008, the surge of food prices has driven 110 million people into poverty and added 44 million more to the undernourished. Nine hundred and twenty-five million people go hungry because they cannot afford to pay for it. In developing countries, rising food prices form a major threat to food security, particularly because people spend 50-80% of their income on food.

In developing countries, 43 percent of the farmers are women. Female farmers are considered as efficient as men; however, they do not perform as well because they do not have access to the same inputs, services and productive resources – including water.

The way that water is managed in agriculture has caused wide-scale changes in eco-systems and undermined the provision of a wide range of eco-system services. The external cost of the damage to people and eco-systems, and clean-up processes, from the agricultural sector is significant. In the United States of America, for instance, the estimated cost is US$9–20 billion per year.

Agriculture contributes to climate change through its share of greenhouse gases emissions, which in turn affects the planet's water cycle, adding another layer of uncertainties and risks to food production. It is predicted that South Asia and Southern Africa will be the most vulnerable regions to climate change-related food shortages by 2030.

What can be done

In order to achieve a global food and nutritional security, commitments and investments are needed

A. To produce more nutritious food with less water :

1. Innovative technologies are required to ensure a greener and more sustainable food production
2. They are needed to improve crop yields
3. implement efficient irrigation strategies
4. reuse of drainage water and use of water resources of marginal quality
5. produce smarter ways to use fertilizer and water
6. improve crop protection
7. reduce post-harvest losses
8. Create more sustainable livestock and marine production.

B. To focus on human capacities and institutional framework : Agricultural development in the least developing countries lies mainly in the hands of small holders, a large majority of whom are women. Therefore, new institutional arrangements are needed that centralize the responsibility for water regulation, yet decentralize water management responsibility and increase user ownership and participation.

C. To improve the value chain : From production, post-harvest handling, processing, retailing, consumption to distribution and trade, efficient water and food recycling

[1]SRF, Subhash Chandra Foundation Project (IDV), KVK, Sadalpur
[2]Student, AMITY University, Noida

strategies can be addressed. It can help secure environmental water requirements when reuse of treated water is not culturally acceptable for other uses.

The Challenge

To feed a growing world population, we have no option but to intensify crop production. But farmers face unprecedented constraints. In order to grow, agriculture must learn to save.

The Green Revolution led to a quantum leap in food production and bolstered world food security. In many countries, however, intensive crop production has depleted agriculture's natural resource base, jeopardizing future productivity. In order to meet projected demand over the next 40 years, farmers in the developing world must double food production, a challenge made even more daunting by the combined effects of climate change and growing competition for land, water and energy. Sustainable crop production intensification aims to produce more from the same area of land while conserving resources, reducing negative impacts on the environment and enhancing natural capital and the flow of eco-system services. It can be achieved by :

1. Farming systems : Sustainable crop production intensification will be built on farming systems that offer a range of productivity, socio-economic and environmental benefits to producers and to society at large. Farmers can grow more and save natural resources, time and money with conservation agriculture, which minimizes tillage, protects the soil surface and sows crops in rotations that enrich the soil. It helps reduce water needs by 30 percent and energy costs by up to 60 percent. Trials in southern Africa saw a six-fold increase in maize yields. Conservation agriculture practices are a key component of sustainable intensification, which also require using good seed of high-yielding adapted varieties, integrated pest management plant nutrition based on healthy soils, efficient water management, and the integration of crops, pastures, trees and livestock. Such systems are knowledge-intensive. Policies for sustainable crop production intensification should build capacity through extension approaches, such as farmer field schools and facilitate local production of specialized farm tools.

2. Water management : Sustainable intensification requires smarter, precision technologies for irrigation and farming practices that use eco-system approaches to conserve water. Cities and industries are competing intensely with agriculture for the use of water. Despite its high productivity, irrigation is under growing pressure to reduce its environmental impact, including soil salinization and nitrate contamination of aquifers. Knowledge-based precision irrigation that provides reliable and flexible water application, along with deficit irrigation and waste water-reuse, will be a major platform for sustainable intensification. Policies will need to eliminate perverse subsidies that encourage farmers to waste water. In rainfed areas, climate change threatens millions of small farms. Increasing rainfed productivity will depend on the use of improved, drought tolerant varieties and management practices that save water.

3. Soil health : Agriculture must, literally, return to its roots by re-discovering the importance of healthy soil, drawing on natural sources of plant nutrition, and using mineral fertilizer wisely. Soils rich in biota and organic matter are the foundation of increased crop productivity. The best yields are achieved when nutrients come from a mix of mineral fertilizers and natural sources, such as manure and nitrogen-fixing crops and trees. Judicious use of mineral fertilizers saves money and ensures that nutrients reach the plant and do not pollute air, soil and waterways. Policies to promote soil health should encourage conservation agriculture and mixed crop-livestock and agro-forestry systems that enhance soil fertility. They should remove incentives that encourage mechanical tillage and the wasteful use of fertilizers and transfer to farmer's precision approaches, such as urea deep placement and site specific nutrient management.

4. Plant protection : Pesticides kill pests, but also pests' natural enemies and their overuse can harm farmers, consumers and the environment. The first line of defense is a healthy agro-eco-system. In well managed farming systems, crop losses to insects can often be kept to an acceptable minimum by deploying resistant varieties, conserving predators and managing crop nutrient levels to reduce insect reproduction. Recommended measures against diseases include use of clean planting material, crop rotations to suppress pathogens and eliminating infected host plants. Effective weed management entails timely manual weeding, minimized tillage and the use of surface residues. When necessary, lower risk synthetic pesticides should be used for targeted control, in the right quantity and at the right time. Integrated pest management can be promoted through farmer field schools, local production of biocontrol agents, strict pesticide regulations and removal of pesticide subsidies.

5. Policies and institutions : To encourage small holders to adopt sustainable crop production intensification, fundamental changes are needed in agricultural development policies and institutions. First, farming needs to be profitable small holders must be able to afford inputs and be sure of earning a reasonable price for their crops. Some countries protect income by fixing minimum prices for commodities; others are exploring “smart subsidies” on inputs, targeted to low-income producers. Policymakers also need to devise incentives for small-scale farmers to use natural resources wisely – for example, through payments for environmental services – and reduce the transaction costs of access to credit, which is urgently needed for investment. In many countries, regulations are needed to protect farmers from unscrupulous dealers selling bogus seed and other inputs. Major investment will be needed to rebuild research and technology transfer capacity in developing countries in order to provide farmers with appropriate technologies and to enhance their skills through farmer field schools.

Dust Storm : Causes and Preventive Measure

✍ Yogesh Kumar, Raj Singh and Anil Kumar
Department of Agricultural Meteorology
CCS Haryana Agricultural University, Hisar

Over the past few years, rise in the global temperature has set new records and that is leading to increase in the number of extreme weather events. India may also witness an increase in the severity and frequency of the dust storms and thunderstorms. Climate gets warmer due to temperature gradient is going to become very steep. This steep increase in temperature gradient will lead to two things – heat waves and dust storms. These events happen between March to May period mainly in pre-monsoon period, temperatures are very high around 44-45 degree Celsius or more that leads to such activities.

Climate change is leading to a rise in global temperature. In January, a report by the National Aeronautics and Space Administration (NASA) of the US Government, said that the global surface temperature of the earth in 2017 was the second warmest in the recorded history since 1880. Due to climate change and global warming, these types of weather activities (dust storms) are increasing. Heat waves incidents are also increasing and temperature records are frequently breaking; it produced more violent dust storm and thunderstorm over North-West India in the recent years.

The Indian Meteorological Department officials admit that the severity of the dust storm was high and it needs to be studied further to understand the associated trends. Experts also believe that the severity and frequency of dust storms are expected to rise in years ahead due to rising global temperature. "With the rise in global temperature, the soil is going to become dry. So, the amount of soil that wind can carry is also increasing. With both the intensity of the wind and dryness of the soil increasing, the intensity of dust storm is going to further increase in the future. It may be due to that climate change is intensifying all extreme weather events."

What is a dust storm?

Dust storm is an ensemble of particle of dust or sand energetically lifted to great height by a strong and turbulent wind. A dust storm is a phenomenon common in hot and dry climates. Strong winds and loose sand can cause dust storms to form, where visibility is greatly reduced.

It is mainly occurred in Arid or desert region in North West India.

Dust storm in Eastern part is called as "*Kalbaisakhi*" and in North-Western part is called as *Aandhi*.

The wind speed can reach up to 100 km/hr and in some cases the speed may even exceeds 100 km/hr.

Where is it coming from?

Mainly from Rajasthan, with massive whirlwinds from Afghanistan and Pakistan entering India (those countries have been sweltering in record-breaking heat recently, giving rise to exceptionally strong North-Easterly winds, even forming a river of brown dust over the Arabian Sea). Strong-anti cyclonic winds, blowing from Rajasthan, are the reason behind the worsening air quality in Delhi, Punjab, Haryana, Rajasthan, Uttarakhand and Western Uttar Pradesh found them in the midst of a massive dust storm accompanied by rain and thunder. These storms were powerful enough to kill people, and destroy homes and infrastructure.

The dust storm has also increased the temperature in the area. The dust has layered the atmosphere; it is in turn, restricting the escape of the long wave radiation due to which it is trapped within the atmosphere, resulting in rising the night temperatures of parts of North-West India.

Cause of dust storm

The main cause of this storm is the strong anti-cyclonic winds coming from regions in Rajasthan which is increasing the number of coarse dust particles in the air. The direction of the wind changed to West and North-West and then changed again to West and South-West cause dust and hot air to travel from Rajasthan to Delhi causing these dust storms.

Rajasthan being majorly a desert, consists of areas that experience extremely high temperatures. Moisture levels were also high in the atmosphere and the heat causes the vapour to rise above and form into clouds. The wind coming in from Eastern parts of India carried the moisture which further helped in formation of clouds. The water vapour which is present in the heavier air, which is at the bottom, gets heated up, and as it gets less dense, it displaces the air above it and rises above. Here, due to the drop in temperature, the vapour condenses and forms clouds.

The difference in air pressure across North India caused the movement of winds, which flew in at high speeds, picking up sand and sweeping across Rajasthan.

Preventive measures

1. If you're from North India, you're likely to own a mask — back from the smoggy winter and summer days. Masks such as these, which protects you from particulate matter, should be kept handy. In case you don't have a mask and find yourself out in the open during a dust storm, protect what's most important first: your eyes, nose, ears and mouth. Use whatever cloth you have to cover your face and avoid inhaling the dust. Dust can also damage your eyes and it's important to protect them however you can. This is why you should carry a pair of glasses or goggles.
2. Find shelter or at least position yourself on the leeward side (outflow of air). That way, you might be able to avoid coming into direct contact with a lot of dust. Hide behind sturdy walls, high intensity winds have the potential to carry heavy objects.
3. If you are driving when the storm starts, stop at a safe place and wait for the storm to pass. Dust storms severely affect visibility which increases the risk of road accidents. Also, keep windows closed. Air conditioning instead of fresh air will keep you safe for a change. *(contd. on page 32)*

Agro-Techniques for Direct Seeding of Basmati Rice

Satyajeet, Samunder Singh[1] and S.P. Yadav[2]
Krishi Vigyan Kendra, Jhajjar
CCS Haryana Agricultural University, Hisar

Mechanization appears to be an important strategy to maintain productivity of rice-wheat cropping system, besides reducing the chances of human drudgeries and cost of cultivation. Mechanization not only saves time, but also helps in improving the use efficiency of other agro-inputs. In order to fulfil the requirements for agriculture, domestic and industrial purpose, the dependency on groundwater in Eastern Haryana is rapidly increasing. Over the years there has been used overexploitation of ground water, which has been used to meet the increasing demand for water. In large part, this is attributable to the increased popularity of rice cultivation. Rice consumes more than 50 percent of water used for irrigation. Because of increasing water scarcity, there is need to develop alternative systems of rice cultivation that requires less water. Direct seed rice (D.S.R.) is an innovation to save water, reduce cost, save time and sustains production in which the rice is grown in un-puddle and non-saturated soil without ponded water. It will help in improving soil health and saving of water resources along with labour and energy. The methodology of direct seeding of rice is as under.

Type of Soil

Soils of whole rice-wheat growing areas of the state suitable for direct seeding of basmati rice; however, medium textured soils are more suitable for direct seeding of rice. The field should be laser levelled for better germination and saving of water. It must be treated as pre-requisite.

Sowing Machine

Zero-Till Seed-cum-Fertilizer Drill fitted with inclined plates and inverted T-type furrow openers should be used for direct seeding of rice.

Sowing Methods

Direct seeding can be done by adopting any of the following two methods :

(i) Drill sowing in *vattar* field (un-puddle) with delayed first irrigation : Prepare the field with two-three ploughings followed by planking. Just after that, sowing should be done with drill at a depth of 3-5 cm and planking should be given just after sowing. Firm contact of seed with soil is important. The field preparation and sowing operation should be preferably in the evening hours to avoid moisture losses.

(ii) Drill sowing in dry field (un-puddle) immediately followed by irrigation : Prepare the field with two-three ploughings followed by planking . Sowing should be done with drill at a depth of 2-3 cm. Planking is not required after sowing. Apply the first irrigation just after sowing.

Varieties recommended for DSR

Scented/*basmati* group of rice varieties (Taraori Basmati, Pusa Basmati 1, Pusa Basmati 1121 and CSR 30) are suitable for sowing under direct seeding.

Time of sowing

The optimum time for sowing of rice under direct seeding is 2nd to 3rd week of June. The crop should germinate before onset of monsoon.

Seed rate and treatment

The optimum seed rate is 8 kg per acre. Seed should be soaked in a solution of recommended fungicide (10g bavistin/emisan + 1 g streptocycline per 10 kg seed) for 24 hours. After soaking, seed should be dried in shade for 1-2 hours to make it friable for proper seeding with seed-cum-fertilizer drills.

Weed management

Weed flora of the direct seeded fields is quite different than the conventional puddle transplant rice due to difference in moisture status in the soil. The grasses (*Leptochloa, Eragrostis, Dactyloctenium*, etc.) other than *Echinochloa crusgalli* and *E. colonum*, along with sedges like *Cyperus rotundus* may dominate the field of direct seeded rice. For broad spectrum weed control, apply the following herbicides with knapsack sprayer fitted with flat fan nozzle :

(1) In *vattar* DSR, apply pendimethalin (Stomp 30% EC) @ 1.3 liter/acre just after sowing in a spray volume of 200 liter water. Spray should be done on moist soil. At 15-25 days after sowing (DAS), apply bispyribac sodium (Nominee Gold 10% SC) @ 100 ml/acre in a spray volume of 120 liter water.

(2) In direct seeded rice immediately followed by irrigation, apply oxadiargyl (Topstar 80% WP) @ 50 g/acre in moist soil after irrigation (0-3 DAS) in a spray volume of 120 liter water . At 15-25 DAS, apply bispyribac sodium (Nominee Gold 10% SC) @ 100 ml/acre in a spray volume of 120 liter water.

More than 90 per cent weed control could be achieved by using aforesaid herbicidal combinations. However, one manual weeding (easy in line sown DSR) or spray of 2, 4-D E at 500 g per acre (against broadleaf weeds) or Sunrice (Ethoxysulfuron 15% WDG) 50 g per Almix (premix of metsulfuron+chlorimuron) 8 g per acre (against broadleaf weeds and sedges) at 25-30 DAS may be required at few locations to manage additional weed infestation, if any (similar to as done in puddle transplanted rice).

(3) Stale-bed technique should be adopted for reducing the load of weeds (including weedy rice, if any) in direct seeded rice. This will also help in tackling the problem of infestation of-type rice plants germinated because of presence of previous season rice seeds in the field. *(contd. on page 32)*

[1]Deptt. of Agronomy, CCSHAU, Hisar
[2]Regional Research Station, Bawal

Practical Methods of Heat Detection in Dairy Cows and Buffaloes

✍ Swati Ruhil[1] and Vikas Khichar
Haryana Pashu Vigyan Kendra, Uchani, Karnal
CCS Haryana Agricultural University, Hisar

Proper heat detection and timed AI are the essentials for obtaining one calf per year from cows and one calf per fourteen months from buffaloes. Poor heat detection decreases the fertility status of the herd. For improving the reproductive efficiency of herd heat detection aids along with visual observation should be used to reduce the incidence of unnoticed estrus because each missed heat costs 21 days loss in production.

Methods of heat detection

Estrus signs : Signs like swollen vulva, cervico-mucus vaginal discharge sometimes hanging from vulva to feet, homosexual behavior occasionally observed in buffaloes, inappetance, bellowing, increase frequency of urination are commonly seen in both cows and buffaloes during heat period. Apart from these buffaloes are the shy breeders they express estrus signs less intensively than cows.

Bull parading : Parading of teaser or vasectomized bulls in the shed at least twice during cooler part of the day is the common practice of heat detection especially in buffaloes. Bulls may be fitted with marking devices for efficient heat detection.

Recto-genital palpation : At estrus uterine horns become coiled, tonic while during diestrus they become flaccid.

Tail painting : Tail head is painted with dyes of different color. When bull mounts on the animal in estrus dye fades away.

Use of androgenized cow : Androgenized cow will behave like a male. It minimizes the risk of transmitting venereal diseases in herd. A chin ball device may be fitted on the cow.

Chin ball device : Bull is fitted with chin ball, when the bull mounts paint is smeared on the back of the estrus animal which indicates mounting.

Bio stimulation : Commonly used for detection of silent heat especially in buffaloes. Presence of male will intensify the estrus signs.

Pressure sensitive devices like KAMAR : They are fitted on the sacrum of cow. When bull mounts dye is released. Not good for buffaloes as the habit of wallowing interferes with heat detection.

Heat watch system : It is a radio telemetric system. When cow is mounted signal is transmitted to a receiver and recorded by the computer. A cow is declared to be in heat if shows three mounting within four hours.

Heat patch with visible color change : A heat patch is applied on the tail head, after mounting the color of dye changes.

Use of CCTV camera

Pedometer : They are attached to either neck or leg. Animal in estrus shows increased activity, a signal is sent by pedometer which is received and passed on the computer. They are not popular because of high cost and expense of replacing the lost one.

Estrus synchronization : It allows easy heat detection and timed A.I. All synchronized animals will come in heat on same day. Different protocols can be used like Ov synch, pre synch, etc. Highly efficient for both cycling and non-cycling animals.

[1]Government Veterinary Hospital, Dhab Dhani (Bhiwani)

(from page 30...)

4. As per the advisory, those who are stopping by the road or parking their vehicles should keep away from overhead electrical wires, tinned roofs, trees, etc. and take shelter under only concrete structures. Drivers are advised to use dippers or parking lights while driving.
5. If you are asthmatic or have dust allergies, you should never step outside without your inhalers and medicines.
6. Last but not the least, always carry water. It is essential to be hydrated when caught in the eye of a storm.

(from page 31...)

Irrigation scheduling

Under *vattar* DSR, first irrigation may be applied at 7-15 DAS depending upon weather conditions. The follow up irrigation should be applied at weekly intervals. Under direct seeded rice immediately followed by irrigation, subsequent irrigations should be applied at 4-5 DAS to ensure uniform germination and avoid seedling mortality. The follow up irrigation schedule will be similar as in vattar DSR. Care should be taken that there should be no water stress at two crucial stages i.e. panicle initiation and grain filling.

Nutrient management

By applying 30 kg N, 12 kg P_2O_5 and 10 kg zinc sulphate per acre will meet out the nutritional requirement of basmati DSR. Apply 25 kg DAP and 10 kg zinc sulphate per acre as basal application at the time of sowing. Apply 28 kg urea/acre each at 15 and 50 days after sowing. Deficiency of certain micronutrients mainly iron may appear in DSR. For that, spray of 0.5% solution of ferrous sulphate should be done, which can be repeated at weekly interval as per need.

Clipping/Chopping

There is no need of chopping in direct seeded basmati rice which is usually done at 55 DAS in puddle transplanted basmati rice.

Insect-pest and disease management

Insect-pest and disease management will be similar to the conventional puddle transplant rice. However, possibilities of termites and brown spot disease incidence are more, hence need special attention for their management options similar to as described for puddle transplanted rice. The possibilities of foot-rot and bakanae disease are less in direct seeded rice.

हरियाणा खेती एवं अन्य प्रकाशनों में विज्ञापन हेतु विज्ञापन दरें

पृष्ठ	साधारण (रु०)	छः या छः माह से अधिक समय के लिए विज्ञापन दर (रु०)	रंगीन विज्ञापन दर (रु०)
चौथा कवर पृष्ठ	2500/–	2400/–	6000/–
दूसरा कवर पृष्ठ	2400/–	2300/–	5800/–
तीसरा कवर पृष्ठ	2300/–	2200/–	5500/–
साधारण पृष्ठ	2000/–	1900/–	4700/–
आधा पृष्ठ	1200/–	1100/–	–

लिफाफे का मुख पृष्ठ	–	आकार 9 सैं.मी. × 11 सैं.मी.	4000/–
पिछला पृष्ठ	–	आकार 18 सैं.मी. × 22 सैं.मी.	4000/–

जी.एस.टी. - विश्वविद्यालय के नियमों के अनुसार।

विज्ञापन देने हेतु निम्न पते पर संपर्क करें :

प्रकाशन अनुभाग

गांधी भवन

चौ. च. सिं. हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय

हिसार (हरियाणा)

फोन : 01662-255234